शब्द रंजन

विचार एवं जन संवाद का पाक्षिक

वर्ष 1 | अंक 8 | उदयपुर रविवार 01 मई 2016 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

महानायक बच्चन ने किया उदयपुर का कल्याण

कल्याण ज्वैलर्स के 97वें शोरूम के शुभारंभ पर अरविंदसिंह मेवाड़, कल्याण ज्वेलर्स के चैयरमेन व प्रबंध निदेशक टी.एस. कल्याणरमन, एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर्स रमेश कल्याणरमन तथा राजेश कल्याणरमन की उपस्थिति

-डॉ. तुक्तक भानावत-

उदयपुर। कल्याण ज्वेलर्स के ब्रांड एम्बेसेडर्स और बॉलीवुड जगत के महान सितारे अमिताभ बच्चन ने जोधपुर, जयपुर के बाद उदयपुर में कल्याण ज्वेलर्स के 97 वें शोरूम का शुभारंभ किया। कल्याण ज्वलेर्स के इस बहुप्रतीक्षित लॉन्च को देखने के लिए लोगों की भारी भीड़ उमड़ पड़ी जिसे अमिताभ की मौजुदगी ने यादगार बना दिया।

अमिताभ शोरूम का उद्घाटन करने 24 अप्रेल शाम 6.30 बजे उदयपुर पहुंचे। उनके साथ कल्याण ज्वेलर्स के चेयरमैन और प्रबंध निदेशक टी.एस. कल्याणरमन, एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर्स रमेश कल्याणरमन एवं राजेश कल्याणरमन और अरविन्दसिंह मेवाड़ मौजूद थे। अमिताभ ने शोरूम के बाहर जुटी भारी भीड़ का हाथ हिला कर अभिवादन किया। अमिताभ ने इस मौके पर सफेद कुर्ता-पायजामा और उस पर गोल्डन कोटी पहन रखी थी।

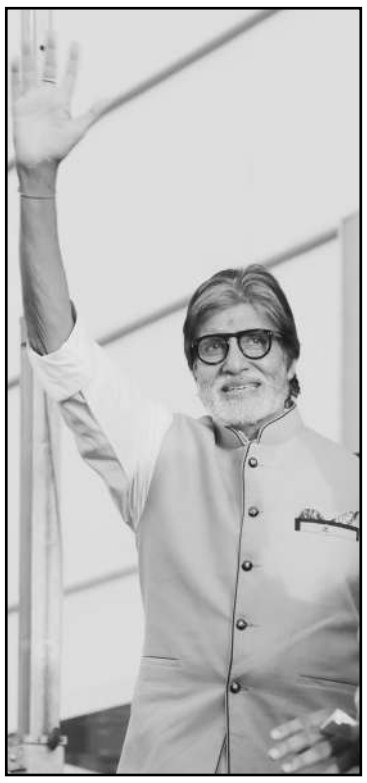

अमिताभ बच्चन ने कल्याण ज्वेलर्स के शोरूम का रिबन काट, दीप प्रज्वलन कर औपचारिक उद्घाटन करने के पश्चात तीन मंजीला शोरूम का अवलोकन किया। अवलोकन के बाद शोरूम के बाहर बनाये गये स्टेज पर उन्होंने मिडिया और दर्शकों से मुखातिब होते हुए कहा- **मुझे सभी से मिल कर बहुत खुशी महसूस हो रही है। उदयपुर आकर मैं धन्य हो गया। कई बार उदयपुर आना हुआ। यह खूबसूरत शहर मुझे बार-बार अपनी और आकर्षित करता है।**

मैं और मेरा परिवार काफी सालों से कल्याण ज्वेलर्स से जुड़ा हुआ है। कल्याण ज्वेलर्स ने जो भरोसा लोगों में कायम कर रखा है वह राजस्थान में भी कायम रहेगा।

इस दौरान बॉलीवुड के महानायक को इतने करीब देखकर दर्शक पूरी तरह से मंत्रमुग्ध हो गये। अमिताभ बच्चन की मौजूदगी ने भीड़ को दीवाना बना दिया। सभी लोग अपने सुपरस्टार की झलक पाने के लिए बेताब दिखे। अमिताभ ने भी सभी दर्शकों का अभिवादन स्वीकार कर उन्हें खुश कर दिया। स्वयं अमिताभ ने इस यादगार पल की सेल्फी ली।

कल्याण ज्वेलर्स के चेयरमैन टी.एस. कल्याणरमन, ने कहा कि राजस्थान में अब लोग जयपुर, उदयपुर और जोधपुर में कल्याण के तीन शोरूम्स

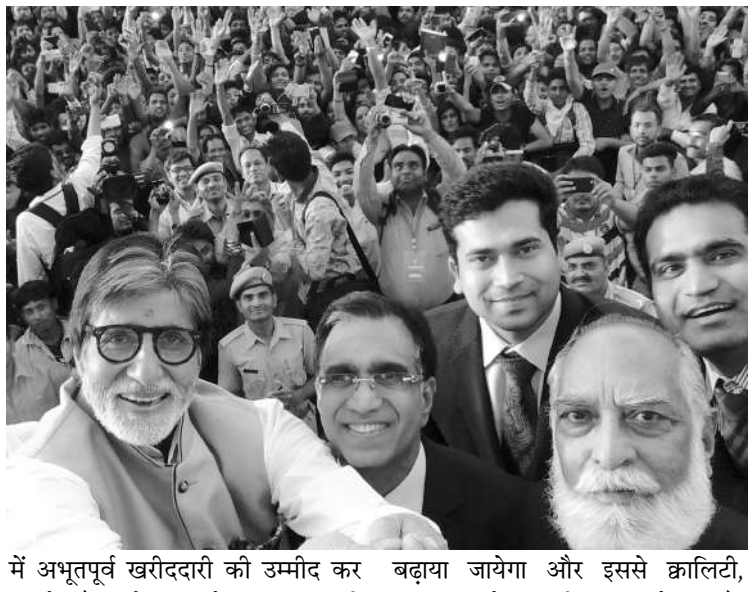

में अभूतपूर्व खरीददारी की उम्मीद कर सकते हैं। शोरूम्स में कल्याण की लोकप्रिय और असली पोलकी, गोल्ड, डायमंड और बहुमूल्य रत्नजड़ित आभूषण खरीद सकते हैं जिसे देश भर से डिजाइन किया गया है। कल्याण द्वारा राजस्थान की अनूठी आभूषण धरोहर को आगे बढ़ाया जायेगा और इससे क्वालिटी, डिजाइन, सेवा, कीमत निर्धारण और नवाचार में सर्वश्रेष्ठ आभूषण पद्धतियों को लाकर भारत के प्रमुख आभूषण गंतव्य के तौर पर राज्य की स्थिति को सुदृढ़ करने में मदद मिलेगी। कल्याण ज्वेलर्स दक्षिण भारत, महाराष्ट्र, गुजरात, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर), पंजाब और भुवनेश्वर में उपस्थिति के साथ एक मजबूत राष्ट्रीय कंपनी बनकर उभरा है। कंपनी ने इस साल 100 शोरूम्स की उपलब्धि हासिल करने का लक्ष्य तय किया है।

उल्लेखनीय है कि कल्याण ज्वेलर्स भारत में सबसे बड़ी आभूषण विनिर्माता एवं वितरक कंपनियों में से एक है। इसका मुख्यालय केरल के त्रिचूर में है। कंपनी द्वारा टेक्सटाइल कारोबार, वितरण एवं थोक बिक्री में एक सदी से अधिक व्याप्त जड़ों का लाभ उठाया जाता है। कल्याण द्वारा सोने, हीरे और बहुमूल्य रत्नों में पारंपरिक एवं समसामयिक आभूषण डिजाइनों की व्यापक श्रृंखला पेश की जाती है जो ग्राहकों की विविध जरूरतों की पूर्ति करती है। मौजूदा समय में भारत और पश्चिम एशिया में कल्याण ज्वेलर्स के स्टोर्स की संख्या 97 तक पहुंच चुकी है जिसमें राजस्थान के तीन शोरूम्स भी शामिल हैं।

ताले पर गोबर : राजतंत्र में लोकतंत्र की छाया

जब उदयपुर की मंडी में गेहूं का भाव ऊंचा चला गया तब महाराणा फतहसिंह ने फरियादी औरतों की परेशानी सुनकर गोदाम के ताले पर गोबर लगवा गोल महल का भंडार खुलवा दिया।

ऐसा नहीं कि राजतंत्र में लोकतंत्र की कोई छाया नहीं होती। राजतंत्र कठोर होता है पर कोमल भी। पहाड़ से ही नदियों का निकास होता आया है। उदयपुर का राजघराना भी मेवाड़ की जनता का उतना ही हमदर्द और हितकारी रहा। बड़ों की पूछ तो सर्वत्र होती है मगर छोटों को भी महत्वपूर्ण समझा जाए, उनकी सुनी जाए और समस्या का तत्काल हल निकला जाए, ऐसा राजा जहां भी होता है उसकी जय-जयकार होती है।

महाराणा फतहसिंह ऐसे ही राणा थे जो चारों ओर अपनी निगाहें पैनी किए रहते और हर आहट तथा हर गंध की पहचान लिए सार्थक सोच-समझ की पहचान पाकर राजकाज की गरिमा बनाये रखते।

एक समय गेहूं का भाव अचानक ऊंचा चला गया। जो धान रूपये का ग्यारह सेर था, वह सात सेर रह गया। इससे आम लोगों की परेशानी बढ़ गई मगर महलों में जाकर अपना दुखड़ा व्यक्त करने की किसी ने हिम्मत नहीं की।

यह हिम्मत की महिलाओं ने। मूर्तिकार सोहनलाल मेघवाल ने बताया कि महिला सशक्तिकरण का तब वह रूप नहीं था जो आज है परंतु मेघवाल, धमकूटा, घसकटा, हतवेगड़ा, रिगड़, कोली, तेरमा, पांचा, बलाई, भोई आदि जाति की औरतें इक्ट्ठी हुई और महलों के माणकचौक में पहुंची। दरबार उस वक्त सूरज गोखड़े में पोशाक धारण कर रहे थे।

अचानक उनकी निगाह उन औरतों पर पड़ी। उन्होंने डोढ्या ठाकुर को औरतों के आने का कारण जानने को कहा। लौटकर ठाकुर ने कहा- अन्नदाता, मण्डी में गेहूं महंगा हो गया है सो ये औरतें उसकी फरियाद करने आई हैं। यह सुन महाराणा ने हुक्म दिया कि गोदाम के ताले पर गोबर लगा दिया जाय। उसी वक्त काला गोखड़ा में रह रहे नगरसेठ ने गोल महल का भण्डार खुलवा दिया जिससे गेहूं का भाव पूर्ववत हो गया।

गोबर लगाने से तात्पर्य आण दिलाने से है। ताले पर गोबर लगाने से तात्पर्य राजाज्ञा के बिना उस ताले को कोई नहीं खोल सकता। इस आण का प्रचलन वर्तमान में भी देखने को मिलता है। राह पड़े गोबर पर किसी के द्वारा पत्थर रखने से उसे दूसरा कोई नहीं छूता है। वही उसका मालिक होता है जिसने उस पर पत्थर रखा है।

स्मृतियों के शिखर (8) : डॉ. महेन्द्र भानावत

देवेन्द्र भाई कर्णावट छोटे-बड़े मित्रों के बीच

अणुव्रत और आचार्य तुलसी से जुड़ने के बाद वे पूर्णत: अणुव्रत-अणुव्रती ही हो गये थे। उनकी यात्रा अ (अणुव्रत) आ (आचार्य तुलसी) से शुरू होकर ओम अर्हम् पर पूर्ण हुई। देवेन्द्रजी के पत्रों और समय-समय पर उनकी मिलन सरिता में भी उनकी जीवनधर्मिता और मुखर मैत्री की मिठास के कई महकते मधुरम मिलते हैं जो उनके कर्मक्षेत्र की कमनीयता के और मित्रों के प्रति आत्मीय मैत्री तथा अपनत्व के यारानापन की यादों के द्योतक हैं।

देवेन्द्र भाई कर्णावट ठंडे मिजाज के मुखर पुरूषार्थी थे। विपरीत परिस्थितियों में भी वे विचलित होनेवालों में नहीं थे। उनके जो भी संपर्क में आया वह संपर्क कभी नहीं टूटा, गाढ़ा-दर-गाढ़ा ही होता रहा। वे सबके प्रति स्नेहशील और आत्मीय बने रहे। सन् 1962-65 के दौरान उनसे मेरा परिचय हुआ जो अंत तक मधुरेण बना रहा। वे जब भी मिलते, तसल्लीपूर्वक मिलते। कभी हड़बड़ाहट या हायतौबा में नहीं मिले। अणुव्रत और आचार्य तुलसी से जुड़ने के बाद वे पूर्णत: अणुव्रत-अणुव्रती ही हो गये थे। एक साधारण कार्यकर्ता से अणुव्रत वक्ता, प्रवक्ता, अध्यक्ष और पुरस्कर्ता होते-होते उसी में रम गये। इस तरह उनकी यात्रा अ (अणुव्रत) आ (आचार्य तुलसी) से शुरू होकर ओम अर्हम् पर पूर्ण हुई।

मेरे साथ उनकी अति आत्मीयता ही रही, इसका सबब क्या रहा, मैं नहीं जान पाया। जब भी, जहां भी मिले, अति व्यस्त और अति बड़ों के बीच होते हुए भी वे मुझसे मिले बिना नहीं रहे। उदयपुर आते तो मिलते ही मिलते। खूब गपशप होती। कहते भी कि आपसे मेरी अति आत्मीयता, कोई पूर्व जन्म का ही कारण है। ऐसी गपशप और किसी के साथ नहीं लगती। दिलदार और यारबाज लोगों के बीच ही सब तरह की चर्चा हो सकती है। इधर सबसे मिलकर मैं हल्का होता हूं और ताजगी के साथ काम करने की ऊर्जा पाता हूं।

उन्होंने मुझे अखिल भारतीय अणुव्रत समिति से जोड़ा और सामरजी को अध्यक्ष बनाया। उसके फलस्वरूप कलामंडल अपने कला प्रदर्शनों में अधिक ग्रामोन्मुखी हुआ। जहां-जहां कठपुतली प्रदर्शन देते, वहां-वहां पहले-बाद में अणुव्रत की प्रासंगिक चर्चा करते। प्रदर्शन के दौरान भी सामरजी कलाकारों को कहते- जरूरत के माफिक डायलोग में अणुव्रत का नमक-मिर्च-मसाला जरूर डाल दिया करो। इससे स्वादिष्ट भोजन की तरह प्रदर्शनों में भी रंग निखर आयेगा। खाली समय कलाकारों का मन मस्तिष्क अणुव्रत के मसाले के डायलोग में लगा रहता।

मैं देवेन्द्रजी को अणुव्रत बाबत् बहुत सारी बातें लिखता। सही स्थिति का आकलन देता और सुझाव भी देता। वे बातें भी लिखता जो उनके लिए ठकुर सुहाती नहीं होती। उन्होंने कभी कोई बात आई गई नहीं की, न कभी खिन्नता ही प्रदर्शित की। एक पत्र में उन्होंने लिखा-

'आपने अपनी मधुरतम लेखनी से मेरे हृदय को झंझोर दिया। अपने पत्र में आपने अणुव्रत की स्थिति को अधिक स्पष्ट किया है साथ ही एक चुनौती भी प्रस्तुत कर दी है। यह एक दिशा-निर्देश है। प्रयत्न करूंगा कि मैं आपकी भावना तक पहुंच सकूं। अणुव्रत की दृष्टि से आपसे विचार विमर्श अब आवश्यक हो चला है। उदयपुर आऊंगा तब आपसे तद्संबंधी विचार करूंगा।'

(पोस्टकार्ड, 3.9.1979)

आचार्य तुलसी के लिए देवेन्द्र भाई सर्वाधिक विश्वासपात्र, ईमानदार, लगनशील, पुरूषार्थी एवं हम सफर थे। आचार्यश्री के एक संकेत मात्र से वे अनेक कार्य बड़ी सफल निष्ठा से सम्पन्न कर लेते थे। अणुव्रत की स्थापना के बीज-जड़ से लेकर उसके विकास की हर पल की वे एक महत्वपूर्ण और अति अनिवार्य धड़कन बने रहे। राजनीति से लेकर समाज, साहित्य, संस्कृति, कला, धर्म, अध्यात्म आदि विविध धारा से संबद्ध हर तपके के मूर्धन्य तथा उल्लासन स्थित मानव मनीषी को अणुव्रत मंच पर लाने और आचार्य तुलसी से विचार विमर्श कराने में उनकी अथक भूमिका रही।

इसमें कोई संदेह नहीं रहा कि अणुव्रत की विचारधारा ने पूरे विश्व को प्रभावित किया और सबकी यह सहमति रही कि पूरे विश्व में शांति की स्थापना के लिए अणुव्रत दर्शन और उसकी वैचारिक भूमिका ही कारगर भूमिका की निर्मित बन सकती है। अणुव्रत आंदोलन के 22 वर्ष पूर्ण होने पर आचार्य तुलसी ने उसमें नया मोड़ देने की आवश्यकता महसूस की और देवेन्द्र भाई को सलाह दी कि शहरों और बड़े कस्बों में अणुव्रत की अलख बहुत जग चुकी है। अब हमें उधर जाना चाहिए जिधर नितांत सुनसान है। हमें गांवों की सुध लेनी चाहिए। ऐसे गांवों की जहां कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं रहता। जहां पवित्र हृदय वाले गरीब लोग निवास करते हैं। जहां भौतिक अनैतिकताओं की कोई हवा नहीं पहुंची है। जहां अधिकांश वे लोग निवास करते हैं जिन्होंने शोषण सहा तो है पर किसी का शोषण नहीं किया है। अब वह समय है जब हमें गरीबों, अछूतों और कुचले दबे शोषित लोगों में दृढ़ता के साथ एक नई क्रांति का सूत्रपात करना चाहिए।

इसलिए अणुव्रत का 23वां अधिवेशन चुरू के एक छोटे से गांव वरदासर में रखा गया जहां अधिकांश हरिजनों की बस्ती थी। देश की ही नहीं, किसी प्रांत की राजधानी से भी सुदूर इस छोटे से गांव का चयन भी एक अद्भुत दृष्टि का ही परिणाम था। दरअसल ऐसा क्षेत्र हमारा, भारतीय लोककला मंडल का क्षेत्र था जिसमें हम पिछले कई वर्षों से कार्य कर रहे थे। हमारा कार्य परंपराओं की धरोहर और विरासत की समृद्ध थाती के उन्नयन विकास संरक्षण और उसके प्रचार-प्रसार को लेकर लोकजीवन में चेतना की उमंग भरने का था। देवेन्द्र भाई वर्षों से हमारे कार्य से नजदीकी संपर्क लिए थे। इस अधिवेशन में कलामंडल के संस्थापक देवीलाल सामर ने अपने लोककला दल के साथ भाग लिया। मैं भी उनके साथ था।

देवेन्द्र भाई ने खुलकर कलामंडल की गतिविधियों और उसके द्वारा लोकजीवन में किये जा रहे लोककला-संस्कृति संबंधी कार्यों की चर्चा की। तब तक सामरजी ने पूरे विश्व में लोककलाओं के महत्व और उसकी कलात्मक प्रदर्शनधर्मिता का डंका बजा दिया था। कठपुतलियों के प्रदर्शनों से हमें विश्व का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार प्राप्त हो चुका था।

आचार्यश्री तो लोकपक्ष, लोकशिक्षा और लोकचेतना के प्रबल पक्षधर थे ही। उन्होंने तो उस अधिवेशन में 6 मार्च 1973 को अपने उद्बोधन-प्रवचन में लोकजीवन के आचार व्यवहार और उसकी जीवनधर्मिता को ही सर्वथा महत्व देते कहा था- 'लोकजीवन का आधार नीति और धर्म है परंतु वह धर्म वहां तक पहुंच नहीं पाया। धर्माचार्यों ने दंभ और अहंकार, सम्मान व सत्ता की क्षुधा के वशीभूत होकर लोकजीवन को सत्य से, धर्म से सदैव वंचित ही रखा। वंचित नहीं रखते तो उसकी सत्ता नहीं रहती। इसी व्यामोह ने लोकजीवन को निरंतर अधोगामी रखा। इसका दोष सबसे अधिक धर्माचार्यों पर आता है। कर्मकांड व जातीयता, सांप्रदायिकता उन्माद व अंध परंपराओं मे शताब्दियों से उलझे भारतीय लोक समुदाय के सामने हम सब धर्माचार्य इसके लिए दोषी हैं। उसकी अवनति में हम कारणभूत हैं। इसका प्रायश्चित करना ही होगा अन्यथा धर्माचार्यों पर से लोक आस्था विलुप्त हो जायेगी।'

आचार्यश्री के इस उद्बोधन का वहां के जन-जन में जो चमत्कारिक प्रभाव पड़ा उसी के फलस्वरूप अगले दो वर्ष की अध्यक्षीय बागडौर देवीलाल सामर को सौंपी गई और मुझे भी अणुव्रत समिति का सम्मानित सदस्य बनाया गया। संदेह नहीं कि इसमें देवेन्द्र भाई की ही उपलब्धिपूर्ण भूमिका रही।

फलस्वरूप दो वर्षों में देश-विदेश में जितने भी कलामंडल के प्रदर्शन, कार्यक्रम हुए और देवेन्द्रजी के माध्यम से जो समारोह, संगोष्ठियां आयोजित की गई उनमें अनुरंजनात्मक पक्षों के माध्यम से अणुव्रत की सैद्धांतिक एवं वैचारिकता की ही अधिक प्रभावना रही। मोहन भाई ने तो वरदासर को पहले से ही अपना कर्म क्षेत्र बना रखा था। उनके अर्पण-समर्पण की कहानी सर्वथा अलग अनूठी है।

उदयपुर में मुझे देवेन्द्रजी ने गांधी स्मृति मंदिर से जोड़ा जिसके अध्यक्ष मास्टर बलवंतसिंह मेहता थे। मुझे सचिव बनाया। यहां से मैंने अपने संपादन में सन् 1979 में 'एक ही विकल्प गांधी' नामक पुस्तक प्रकाशित की। देवेन्द्र भाई को जब-तब भी कोई महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल हुई मैंने उनको पत्र लिखकर प्रसन्नता जाहिर की लेकिन अपनी बेबाक समझ को भी मुखर भाव से लिखने में कोई संकोच नहीं किया। जब उन्हें अणुव्रत पुरस्कार मिला तब वे बड़े उल्लसित मन से मुझसे मिलने आये और मुझे अपने अंक में समेट लिया।

-शेष पृष्ठ सात पर

लेख एक : लेखक दो
भ्रांति का निवारण

शब्द रंजन के अंक 6 में चतुर (चौर्य?) कला के संबंध में इशारों ही इशारों में बहुत कुछ पढ़ा। साहित्य में चौर्यकला के कई घटना-प्रसंग मिलते हैं। डॉ. महेन्द्र भानावत भी कभी इसकी चपेट में आए थे। उनके एक लेख को लेकर जो गहमागहमी हुई उस बाबत् पुख्ती जानकारी यहां प्रस्तुत है।

डॉ. भानावत से लोकपक्ष से जुड़े साहित्य, संस्कृति तथा कला पक्ष की जानकारी प्राप्त करने अनेक लोगों ने समय-समय पर संपर्क किया। उनसे भी अधिसंख्यक लोगों ने उनके द्वारा प्रकाशित पुस्तकों से जानकारी प्राप्त की और समय-समय पर पत्राचार भी किया। कई बार उनके द्वारा कहे गये तथा पुस्तकों में लिखे गये विचार, विषय विषयक जानकारी अदालतों में प्रामाणिक जानकारी की साक्षी बनी।

उत्तरप्रदेश के सहारनपुर जिले के नागल गांव के मदन अरोड़ा भित्ति चित्रकला विषय पर शोधरत थे तब उन्होंने 'राजस्थान की लोकभित्ति चित्रकला' विषयक लेख को डॉ. भानावत तथा प्रो. पी.सी. बरूआ के नाम से छपा देखा। उन्होंने डॉ. भानावत को इसकी सूचना दी। डॉ. भानावत ने श्री अरोड़ा को सही स्थिति से अवगत कराया और राजस्थान ललित अकादमी की पत्रिका 'आकृति' में उनके नाम से वह लेख छपने का संदर्भ दिया। इस पर श्री अरोड़ा ने अकादमी के सचिव को पत्र लिखा। उसकी प्रतिलिपि डॉ. भानावत को तथा सहारनपुर कॉलेज के दिनेशचंद्र अग्रवाल को सही स्थिति जानकर को सहयोग करने बाबत् लिखा। वह पत्र इस प्रकार था-

क्रमांक नं. आरएलकेए/770/76
रवीन्द्र मंच, जयपुर
3 सितंबर 1976

श्री मदन अरोड़ा
ग्राम व डाकखाना नागल
जिला सहारनपुर-उत्तरप्रदेश
विषय : मूल लेखक का निश्चयीकरण।

महोदय,

आपका पत्र 1.9.73 को प्राप्त हुआ। आपके द्वारा भेजी गई तूलिका 1972-73 की प्रति भी प्राप्त हुई। धन्यवाद। जांच करने पाया गया कि 'आकृति' के अप्रेल 1968 अंक में श्री महेन्द्र भानावतजी का लेख 'राजस्थान की लोक भित्ति चित्रकला' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। आपने जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर के चित्रकला विभाग की पत्रिका 'तूलिका' का 1972-73 का जो अंक भेजा है उसमें वही लेख प्रो. पी.सी. बरूआ के नाम से छापा गया है।

विचारणीय है कि श्री भानावत का लेख 4 वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था अत: निष्कर्ष यही निकलता है कि उनका लेख ही मूल लेख है। इस पत्र की प्रतिलिपि उन्हें भेजी जा रही है ताकि वे सही स्थिति पर प्रकाश डाल सकें। पत्र की एक प्रतिलिपि संबंधित कॉलेज के कला विभाग के प्रवक्ता श्री दिनेशचंद्र अग्रवाल को भी भेजी जा रही है जिससे कि वे प्रो. बरूआ से पूछ कर स्थिति स्पष्ट करने में सहायता कर सकें। यदि मूल लेखक की अनुमति के बिना लेख का प्रकाशन अन्य नाम से हुआ है तो निश्चय ही एक अशोभनीय प्रयास है।

भवदीय
सचिव

प्रतिलिपि :

(1) श्री महेन्द्र भानावत को सूचनार्थ तथा इस निवेदन के साथ कि वह उपरोक्त विषय पर प्रकाश डालें।

(2) श्री दिनेशचंद्र अग्रवाल, सहारनपुर को सूचनार्थ तथा इस निवेदन के साथ कि वह स्थिति का पता लगाए और प्रो. बरूआ से इस विषय में पूछकर सही स्थिति जानने में सहायता करें।

इसके उत्तर में डॉ. भानावत ने यह पत्र लिखा-

अनु. / 129 / 76-77
भारतीय लोककला मंडल, उदयपुर
दिनांक : 10.9.76

प्रिय महोदय,

श्री मदन अरोड़ा के नाम भेजे पत्र की प्रतिलिपि मिली। आकृति के अप्रेल 68 के अंक में राजस्थान की लोक भित्ति चित्रकला नाम से जो लेख छपा है वह मेरा ही है। प्रो. पी. सी. बरूआ ने इसे अपने नाम से भी दे दिया सो भी जाना। श्री बरूआ ने एकबार राजस्थान की यात्रा की थी, अपने विभाग की ओर से और यहां भी आये थे, मुझसे मिले भी थे। वे उन्हीं दिनों लगभग ऐसे ही विषय पर शोध भी कर रहे थे इसीलिए उन्होंने यह पकीपकाई सामग्री अपने नाम से दे दी होगी। मुझे अब तक कोई जानकारी नहीं थी। एक लेख ही क्या, लोग तो अन्यों की पांडुलिपियां तक अपने नाम से छपा लेते हैं। यह घटना कोई नई नहीं निकली मेरे लिए, न कोई खास आश्चर्य ही हुआ। मेरा लेख उनके लिए उपयोगी रहा मुझे यह जान प्रसन्नता हुई है। यों आपने उनसे पूछवाया ही है।

भवदीय
महेन्द्र भानावत

प्रतिलिपि :
श्री सचिव
राज. ललित कला अकादमी
रवींद्र मंच, पी.ओ. जयपुर

इसके बाद एक पत्र डॉ. भानावत को सहारनपुर के साहित्याचार्य वी. के. शुक्ल का मिला। यह पत्र इस प्रकार है-

5.10.76

आदरणीय भानावतजी
सप्रेम हरि स्मरण

आपके लेख के संबंध में भ्रांति फैली हुई है। लेख एक, लेखक दो। उक्त संदर्भ में राजस्थान ललित कला अकादमी की ओर से आपको पत्र मिला होगा। आपने उस विषय में कुछ पूछताछ की है क्या? यदि उचित समझें तो सूचना दीजिए ताकि यहां फैली हुई भ्रांत धारणा आगे न फैले। आपका संस्कृति (53) में लेख देखकर आपकी स्मृति हो ही आयी। आशा है, सपरिवार सानंद हैं।

भवदीय
वी. के. शुक्ल

इस पत्र के उत्तर में डॉ. भानावत ने श्री अरोड़ा द्वारा ललित कला अकादमी को लिखे गये पत्र की सूचना देकर लिखा कि सही स्थिति का खुलासा लेखक द्वारा कर दिया गया है। अब इस प्रकरण का पटाक्षेप समझिये।

ठंडे बस्ते में सुगमुगाती राजस्थानी भाषा की संवैधानिक मान्यता

जनपदीय भाषाओं को विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम से जोड़ा जाय

डॉ. महेंद्र भानावत ने पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत को दिया था सुझाव

राजस्थानी भाषा को संवैधानिक मान्यता के लिए पिछले कई वर्षों से आवाज उठाई जाती रही है। समय-समय पर इसके लिए विविध संगठनों द्वारा जगह-जगह आंदोलन किये गये। धरने दिये गये। संगोष्ठियां, सेमीनार, सभा-समारोह भी हुए किंतु राजनीतिक रस्साकशी के बीच कोई परिणाम हाथ नहीं लगा। राजस्थान से जुड़े मध्यप्रदेश में भी जनपदीय भाषाओं की वही स्थिति है जो राजस्थान में है। हम अपनी भाषाओं का संरक्षण कैसे करें। ऐसे कौनसे प्रयत्न अपेक्षित हैं जिनसे ये भाषाएं मड़ियल होने की बजाय मुदित-मुखरित हों। इस बाबत डॉ. महेन्द्र भानावत का लिखा वह पत्र उगेखनीय है जो उन्होंने पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत को 13 फरवरी 2009 को लिखा था। उल्लेखनीय पक्ष यह भी है कि यह पत्र अनुत्तरित ही रहा। शब्द रंजन के पाठकों के लिए यहां डॉ. भानावत का लिखा वह पत्र प्रकाशित किया जा रहा है।

उदयपुर
13 फरवरी 2009

सम्माननीय गहलोत साहब
सादर वन्दे

यह पत्र राजस्थान के विश्वविद्यालयों में जनपदीय भाषा एवं साहित्य के अध्ययन-अध्यापन के संबंध में लिख रहा हूं। राजस्थानी भाषा-मान्यता संबंधी आंदोलन हम लोगों ने 40 वर्ष पूर्व ही प्रारंभ कर दिया था लेकिन इसकी दिशा बदल दी गई और ठीक से नहीं समझने के कारण यह भाषा मान्य नहीं हो पाई और आंदोलन भी ठंडेमंडे सुगबुगाता रहा। वह स्थिति आज भी यूं की यूं बनी हुई है। अस्तु।

मेरा सुझाव दूसरा है। वह यह कि राजस्थान के जो मुख्य-प्रमुख जनपद हैं और उनकी भाषा-बोली में जो साहित्य सृजित है उसे विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाए। पहले एक ही विश्वविद्यालय था। अब ऐसी स्थिति नहीं रही। मेरी दृष्टि में जहां जो-जो विश्वविद्यालय स्थापित हैं वे अपने क्षेत्र के जनपद का प्रतिनिधित्व लिए हैं अत: यह उचित होगा कि बी.ए. तथा एम.ए. की कक्षाओं में हिंदी साहित्य का एक प्रश्नपत्र जनपदीय भाषा और साहित्य से संबंधित हो। इससे राजस्थानी भाषा को लेकर आये दिन जो बवाल खड़ा होता दिखाई देता है वह भी शांत होगा और जनपदीय लोकसाहित्य, लोकसंस्कृति और लोककलाओं की विशिष्ट पहचान बनेगी साथ ही वहां की भाषा में जो साहित्य सृजित हो रहा है उसे बढ़ावा मिलेगा।

पिछले दिनों मैं उज्जैन के विक्रम विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग (हिंदी अध्ययनशाला) में लोकसाहित्य पर केंद्रित दो व्याख्यान देने गया तो वहां की अध्ययनशाला के अध्यक्ष प्रो. डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा से पता चला कि संपूर्ण मध्यप्रदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में एकीकृत व्यवस्था के अंतर्गत बी.ए. तृतीय वर्ष (हिंदी साहित्य) का एक प्रश्नपत्र जनपदीय भाषा और साहित्य का निर्धारित है। यह व्यवस्था इस प्रकार है-

(क) उज्जैन, इंदौर एवं भोपाल विश्वविद्यालय में मालवी तथा निमाड़ी
(ख) सागर, जबलपुर और ग्वालियर विश्वविद्यालय में बुंदेली
(ग) रीवा विश्वविद्यालय में बघेली
(घ) उज्जैन के विक्रम विश्वविद्यालय में एम.ए. (हिंदी) के पाठ्यक्रम में दो वैकल्पिक प्रश्नपत्र मालवी बोली पर केंद्रित हैं। पहला मालवी भाषा और साहित्य (जनपदीय भाषा-साहित्य) पर तथा दूसरा लोकसाहित्य (विशेष संदर्भ मालवी) का।

आपको यह जानकर गौरव की अनुभूति होगी कि पूरे देश में जनपदीय भाषा-बोली एवं साहित्य (वाचिक साहित्य) के संरक्षण, सर्वेक्षण, अध्ययन, उन्नयन और प्रकाशन की दिशा में राजस्थान सबसे अग्रणी रहा और उदयपुर के भारतीय लोककला मंडल में उसके संस्थापक देवीलाल सामर के नेतृत्व में हम लोगों ने जो कार्य किया, उससे दिशा-निर्देश पाकर अन्य राज्य इस ओर अग्रसर हुए हैं। मैंने पहलीबार 1967 में उदयपुर विश्वविद्यालय से आदिवासी भीलों के गवरी नृत्य पर पीएच.डी. कर इसका शुभारंभ किया था फिर रंगायन नामक शुद्ध लोकसाहित्य-संस्कृति की पत्रिका मेरे संपादन में प्रारंभ हुई। मेरा यह अभियान-संकल्प अब भी उसी दिशा में यथावत है।

उदयपुर विश्वविद्यालय के लिए तो कई बार हमने यहां संबंधित कुलपति के समक्ष भी यह मांग रखी थी कि यहां के पाठ्यक्रम में मेवाड़ी तथा वागड़ी भाषा-साहित्य का अध्ययन-अध्यापन हो और चूंकि यह क्षेत्र भीली आदिवासी बहुल क्षेत्र है अत: यहां आदिवासी पीठ की स्थापना हो लेकिन अफसोस तो यह है कि मीरांबाई के नाम पर यहां जो पीठ स्थापित किया हुआ था वह भी न जाने कैसे हवा हो गया।

शिक्षा को लेकर अब कई तरह के प्रयोग होते नजर आ रहे हैं किंतु जब तक छात्रों को प्रदेश में उनकी जमीनी भावभूमि से नहीं जोड़ा जाएगा, कोई भी शिक्षा जीवनी-शक्ति नहीं दे पायेगी। आपसे बहुत सारी उम्मीदें हैं जो राजस्थान को विश्वव्यापी पहचान दिलाने में दृढ़ संकल्पित होंगी।

आपका
डॉ. महेंद्र भानावत

प्रतिष्ठा में:
सम्माननीय श्री अशोकजी गहलोत
मुख्यमंत्री राजस्थान सरकार, जयपुर

समय-समय पर सत्ता का बदलीकरण होता रहता है। अच्छे कार्यों की कोई एक्सपायरी डेट नहीं होती। जो मुद्दे जनहितकारी हैं उनके साथ सत्ता का पत्ता प्रेमरस मेंहदी राचणी की तरह खिलता, रंग बांटता उत्सवी उगास देने वाला होना चाहिए। अब गेंद मुख्यमंत्री वसुंधरा राजेजी के पाले में है। ऐसे में आने वाला समय पाला पड़ने जैसा नहीं होगा। आशा की जानी चाहिए कि घोषणा पत्रों का घोष जनहितकारी प्रवृत्तियों का पारदर्शी परचम लहरायेगा। अस्तु।

डॉ. महेन्द्र भानावत का महत्वपूर्ण साहित्य

डॉ. महेन्द्र भानावत की करीब 90 पुस्तकें प्रकाशित हैं। उनमें से बहुत अप्राप्य हैं। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से संबंधित अभिनंदन ग्रंथ 'लोक मनस्वी' प्रकाशन प्रक्रिया में है। उनकी लिखित कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकें इस प्रकार हैं-

पुस्तक का नाम	मूल्य
भारतीय लोकनाट्य	1500/
परंपरा का लोक	475/
आदिवासी लोक	350/-
जनजाति जीवन और संस्कृति	295/-
महाराष्ट्र के लोकनृत्य	200/-
आदिवासी जीवनधारा	395/-
जनजातियों के धार्मिक सरोकार	150/-
राजस्थान के लोकनृत्य	200/-
गुजरात के लोकनृत्य	200/-
राजस्थान के लोक देवी देवता	150/--
भारतीय लोकमाध्यम	75/-
अजूबा भारत	200/-
पाबूजी की पड़	50/-
लोककलाओं का आजादीकरण	250/-
उदयपुर के आदिवासी	250/-
निर्भय मीरां	250/-
रंग रूड़ो राजस्थान	100/-
कुंवारे देश के आदिवासी	100/-
जन्हें मैं जानता हूं	100/-

बच्चनजी के 30 पत्र

शब्द रंजन के अंक 7 में डॉ. महेंद्र भानावत द्वारा लिखित स्मृतियों के शिखर नामक लेख-श्रृंखला में बच्चनजी के तीन पत्र-आलेख पढ़कर उदयपुर के शिक्षक नारायणकृष्ण 'अकेला' की स्मृति हो आई। डॉ. भानावत के साथ अकेला को कई बार साहित्यिक गपशप करते देखा गया। एकाधबार तो अकेला की एकल कविताएं भी सुनने का सौभाग्य मिला। अच्छी तरह याद है डॉ. भानावत ने दैनिक जय राजस्थान के अपने साप्ताहिक स्तंभ 'चलते-चलते' में भी एकबार अकेला पर लिखा था। अकेला की उम्मीदों का आकाश, शीर्षक वह लेख 16 जून 1985 के अंक में प्रकाशित है। इसमें डॉ. भानावत ने लिखा-

'राजा तुम्हारे अस्तबल के घोड़े मोटे हैं
प्रजा भूखी और नंगी है।
घोड़ों का कहीं अभाव नहीं
लेकिन लोगों की हर तरह की तंगी है।'

कविवर दिनकर की ये पंक्तियां युवा कवि नारायण कृष्ण अकेला की पहचान हैं। कवि से मेरा पुराना परिचय है पर दूर का। नजदीक का परिचय हुआ तो कई कविताएं सुनीं। वैसी ही जैसे कोई बांचने वाला बही के पन्ने खोलता जाता और बांचता जाता है। मुझे लगा, अकेला जूझ का कवि नहीं होकर झुंझलाहट का कवि है। यह अलग बात है कि वह अपने को जोश, क्रांति, सुधार और चेतना का कवि ही अधिक मानता है।

मैंने जब-जब भी इस कवि को देखा, वह खोया हुआ, ऊपरी संकेत का ही अधिक लगा। कभी मुस्कान जब शकुन लेकर आती तो वह नीचे देखता। जीवन से, तन से, मन से भी अकेला रहना चाहता है। उसे कोई दिलचस्पी नहीं है कि समाज भी है। उसका भी अपना परिवेश, रचाव, वातायन और व्यवहार है और वह गृहिणी-गृहस्थ भी है। उसका भी कोई धर्म, कर्म, नेम, नियमन है। अकेला की कविताएं जब वह चाहता, सबको मिलाकर एक कर देता। जब वह चाहता एक की कई कविताएं हो जातीं। उसकी कविता की कुछ पंक्तियां मुझे बहुत अच्छी लगीं। देखिये-

'एक कुर्सी तुम्हारे पास है
और एक मेरे पास
इस मुल्क में कुर्सियां ही कुर्सियां हैं
आदमी कहीं दिखाई नहीं देता
कुछ आदमी हैं
वे भी कुर्सी बन जाना चाहते हैं।
जिनके हाथों में बंदूक होनी थी
उनके हाथों में रूमाल है
ठीक नहीं है कविता का व्यायाम
गाइये रघुपति राघव राजाराम।।'

कवि का उठता हुआ मन ओज, आग और आक्रोश को पकड़ना चाहता है मगर उसको मालूम होना चाहिए कि आग केवल अंगारा ही नहीं होती। आक्रोश क्रोध नहीं होता। आग हिमालय की ठंडक भी होती है और प्रचंड भूकंप की तपन भी। पानी जिस आग को बुझाता है उसी आग पर वह गर्म भी होता है। आदमी के जीवन की यही नियति है चाहे वह अकेला हो या ढकेला।

डॉ. भानावत ने बताया कि बाद में भी अकेला से यदाकदा उनकी भेंट होती रही। अकेला ने बताया कि बच्चनजी से उसका पत्राचार का बड़ा घनिष्ट परिचय रहा। उसने कई पत्र उनको लिखे और बच्चनजी ने भी उन पत्रों के उत्तर में अकेला को पत्र लिखे। ऐसे कोई 30 पत्रों का अकेला ने जिक्र किया और एकबार तो वह उन पत्रों को लेकर उन्हें दिखाने भी आया। सभी पत्र अंतर्देशीय पत्र थे। डॉ. भानावत ने सुझाव दिया कि ये ही पत्र अकेला को पहचान देने के लिए पर्याप्त हैं। वे इन्हें संपादित कर छपवायें और उन पत्रों के साथ-साथ मूल पत्रों को भी छापे।

अकेला रावतभाटा में सरकारी स्कूल में शिक्षक थे। फिर उनसे मिलना नहीं हुआ और सूचना मिली कि उनका निधन भी हो गया।

ग्रामीण प्रबंधन पाठ्यक्रम में प्रवेश की प्रक्रिया शुरू

उदयपुर। अग्रणी स्वास्थ्य प्रबंधन शोध संस्थान आईआईएचएमआर विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ रूरल मैनेजमेंट ने दो साल के पूर्णकालिक एमबीए-ग्रामीण प्रबंधन पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए आवेदन पत्र आमंत्रित किए हैं। इसमें कुल 30 विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जाएगा। यह एक प्रमुख शैक्षणिक पाठ्यक्रम है, जो सार्वजनिक और निजी- दोनों क्षेत्रों में ग्रामीण विकास प्रबंधन के लिए आवश्यक कौशल के साथ प्रशिक्षित पेशेवर प्रबंधकों को तैयार करता है और ग्रामीण तथा विकास क्षेत्रों की गुणवत्ता की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए जाना जाता है। यह आईआईएचएमआर विश्वविद्यालय का फ्लैगशिप कोर्स है। यह छात्रों को प्रबंधन के नवीनतम तरीकों और अवधारणाओं की जानकारी देते हुए उनमें जरूरी दक्षताएं विकसित करता है। किसी मान्यता प्राप्त विवि से न्यूनतम सकल 50 प्रतिशत अंकों के साथ 3 वर्ष की अवधि वाली स्नातक उपाधि प्राप्त, कैट/ मैट/ सीमैट/ एटीएमए/ एक्सएटी का वैध स्कोर या राष्ट्रीय स्तर का अन्य कोई मैनेजमेंट एप्टीट्यूड टैस्ट स्कोर हासिल करने वाले और स्नातक उपाधि के परिणाम की प्रतीक्षा करने वाले/ स्नातक उपाधि के आखिरी वर्ष की परीक्षा देने वाले प्रत्याशी इस पाठ्यक्रम के लिए आवेदन कर सकते हैं।

शब्द रंजन

उदयपुर, रविवार 01 मई 2016

उदयपुर के चार ग-गा

बहुत पुरानी बात नहीं है पर नई भी नहीं, जब उदयपुर पालिका था तब आदमी के पाले में साइकिल मिलती थी और नगर पालिका के पाले में चार ग-गा नामक जीव बड़ी मस्ती से रमण-भ्रमण करते थे। इन चार में तो सर्वाधिक तो गड़ूरे यानी शूकर-परिवार के सदस्य थे। उनके बाद आपको गंडक-परिवार की बहार देखने को मिल जाती थी। तीसरे नंबर पर हमारी धर्ममाता-गोमाता का कद था और अंतिम नंबर गर्दभ यानी गधे राजा का था। गलियों में गड़ूरों तथा गंडकों की अच्छी बस्ती थी। गायों को किसी का डर नहीं था। वे पुलिस को भी दरकिनार कर चौराहों की शान बढ़ाने में सक्षम थी। सब राजीखुशी चल रहा था।

अब निगम आ गया तो गड़ूरे और गधे दिखाई नहीं दे रहे हैं। निगम ने उनको नदारद होने का कोई फरमान जारी नहीं किया है। या तो वे स्वयं ही अपने गम से मुक्त हुए हैं या फिर निगम को गम रहित बनाने के बहाने ओझल हो गये हैं जैसे जुगनू, कौए या और जीव भी ओझल हुए, नहीं दिखाई देते।

निगम से भी आगे यह शहर स्मार्ट सिटी में प्रवेश कर गया है। जो दो गायब हुए हैं, लगता है उनकी स्मार्टनेस भी शेष बचे दो को हस्तांतरित हो गई है। गंडक अब जो भी वाहन मुख्यत: कार उनकी सीमा से गुजरती है उसके आगे-पीछे, दायें-बायें दौड़ी लगाकर अपने होर्न का स्वीच तेज कर अपनी सीमा से सुरक्षित अगली सीमा में प्रवेश कराते हैं और गायें बेबाक गंदगी के कंटेनरों का कीमती कबाड़ जो उनकी अनिच्छा का होता है, सड़क के चारों ओर छिड़कती दिखाई देती हैं।

रात्रि विश्राम भी वे अपने निजी घर को छोड़ जहां उनकी चाह होती है वहां करने को स्वतंत्र रहती हैं। सुबह दूध देने अवश्य मालिक के पास पहुंच जाती हैं। नहीं तो मालिक उन्हें ढूंढ़ता हुआ बड़े अदब से ले जाता मिलता है। दोनों एक-दूसरे को भलीप्रकार समझे हुए हैं। समझने की किसी ने आवश्यकता नहीं समझी कि कितने लोग अकारण गंडकों के काटे कराहते हैं और गायों के सींगों के सिंहासन से पलटे जाकर हड्डी-पसली एक करते हैं। अभी तो सब स्थापना दिवस में स्थूलकाय बने हुए हैं।

पत्र-पिटारी

चुनौतियों भरा सारस्वत अनुष्ठान

शब्द रंजन के अंक मिले। पढ़कर सुखद लगा। शब्द की अस्मिता और सार्थकता के लिए आज की स्थितियों में कोई विरला ही होता है जो ऐसी चुनौतियों भरी पहल करता है। इसके लिए संपादक एवं संरक्षक बधाई के पात्र हैं।

कुछ स्थायी स्तंभों ने विशेष ध्यान आकर्षित किया। डॉ. महेन्द्र भानावत द्वारा स्मृतियों के शिखर 'गोपालप्रसाद व्यास' और ' मोहनभाई अणुव्रती' मर्मस्पर्शी लगे। अणु विभा (अणुव्रत विश्व भारती) के मोहनभाई और उनकी सहधर्मिणी भागीरथी बेन से मेरा मिलना भी हुआ था। उस समय वे दोनों बारीश के पानी को पहाड़ पर इकट्ठा करके इस अद्‌भुत भवन के निर्माण में लगे थे। मुझे ढेरों स्मृतियां पुन: याद आ गई। ऐसे निष्काम कर्मयोगी पर लिखना, सामने लाना, इसके लिए मेरा साधुवाद स्वीकारें।

होली पर मुजरो करूं के बहाने टाइटिल देना यह आपकी परंपरा रही है जो हर बार की तरह लोगों में कौतूहल जगाती है। शाही ठाठ से निकलती गणगौर की सवारियां डॉ. तुक्तक भानावत, दशामाता व्रतानुष्ठान डॉ. कविता मेहता के आलेख लोकरंजन और आस्था को व्यक्त करते प्रभावशाली बन पड़े हैं।

'पोथीखाना' में डॉ. भानावत की 'भारतीय लोकनाट्य' पुस्तक की समीक्षाएं बालकवि बैरागी, डॉ. कुंदन माली, डॉ. पूरन सहगल, ब्रजरतन जोशी ने लिखी हैं। मैंने स्वयं इस विराट लोकनाट्य दर्शना से जुड़ी पुस्तक को पढ़ा है। अपने आपमें अकेली यह प्रथम पुस्तक है जिसमें लोकनाट्यों पर इतना गहन और विशद् अध्ययन किया गया है। डॉ. भगवतीलाल व्यास को बिहारी पुरस्कार, बालकवि बैरागी को लखवाणी पुरस्कार, जितेन्द्र मेहता को अलर्ट संस्थान पुरस्कार के समाचारों के साथ ही काछबली की महिलाओं के मद्य निषेध आंदोलन की सराहना, संबोधन सम्मान-समारोह जैसे समाचार प्रमुखता से छापना प्रशंसनीय है। कान्यो-मान्यो के बहाने साहित्य, समाज, राजनीति इत्यादि पर चुटीली धारदार व्यंग्योक्तियां रस-सृष्टि करती हैं।

15 मार्च के अंक में आपने प्रो. देवकर्णसिंह की दोहा-कृतियों से परिचय कराया जो अभिनंदनीय है। देवकर्णसिंह आज की आपाधापी और प्रसिद्धि-कामना से दूर राजस्थानी भाषा के धुरन्धर किंतु मौन एकांत साधक हैं। उनकी दोहा कृतियों से रू-ब-रू कराना स्तुत्य प्रयास है।

शब्द रंजन सारस्वत अनुष्ठान रच रहा है। मेरी बधाई व शुभकामनाएं स्वीकारें। इसके कलेवर में विभिन्न विधाओं की जो माधुर्य भरी धमक है वह बनी रहनी चाहिए।

-डॉ. रजनी कुलश्रेष्ठ

पोथीखाना

रघुनाथ वैभव : सामाजिक सरोकारों का सेतु-हेतु

श्री रघुनाथप्रसाद तिवाड़ी 'उमंग' के लोकहितकारी जीवन के 80 वर्ष पूर्ण करने पर प्रकाशित ग्रंथ 'रघुनाथ वैभव' उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व की सांगोपांग दर्शना है। अभिनंदन समिति के अध्यक्ष डॉ. अमरसिंह राठौड़ ने अपने अध्यक्षीय मंतव्य में उल्लेखनीय बात की और हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए ठीक ही लिखा- 'हमारे इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं जहां शक्ति के विभिन्न रूप बुद्धिबल, शारीरिकबल, धनबल उपस्थित होते हुए भी व्यक्ति सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा गया क्योंकि ये शक्तियां जनहित में प्रयुक्त नहीं हो सकीं। श्री रघुनाथप्रसाद तिवाड़ी ने अपनी समस्त क्षमताओं एवं शक्ति का प्रयोग बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय किया है। समाज से जितना लिया है, उससे कहीं अधिक समाज को अपनी सेवा के रूप में दिया है। उनकी यह कृतज्ञता ही 'रघुनाथ वैभव' का सेतु और हेतु है।'

ग्रंथ नायक तिवाड़ीजी बहुश्रुत विद्वान, लेखक, चिंतक, विवेचक, अनुवादक और प्राचीन ग्रंथों के सुविज्ञ समालोचक तथा वेद-पुराण के दार्शनिक दधीचि हैं। शब्द-संसार के यायावर श्रीकृष्ण शर्मा के सुयोग्य संपादन में बड़ी साइज का यह वृहदाकार ग्रंथ उनकी सुमति तथा दृष्टि सम्पन्नता का प्रखर पुरूषोत्तम है। अपने आत्मनेपद में तिवाड़ीजी के स्वनाम धन्य को शब्दांकित करते उन्होंने लिखा है-

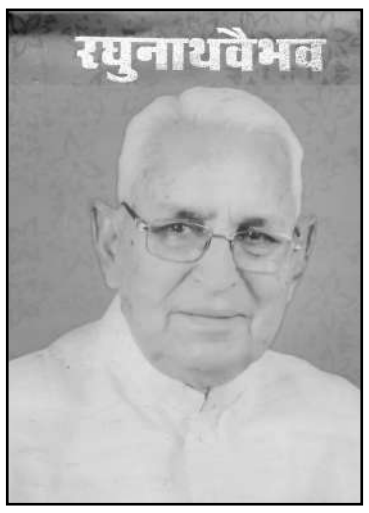

'डॉ. तिवाड़ी उच्चकोटि के चिंतक हैं। वे स्वाभिमान को बोधगम्य भाषा में सर्जित कृतियों में अनुसंधान की दृष्टि से सर्वोपरि महत्व देते रहे हैं और अपनी अवधारणाओं को वेद, पुराण, उपनिषद के प्रमाणों से सिद्ध करने में अटूट विश्वास रखते हैं। जातीय स्वाभिमान के विशेष महत्व को अंगीकार करने के कारण आपने महर्षि वशिष्ठ, उनके पुत्र शक्ति और उनके पुत्र पराशर पर महत्वपूर्ण कृतियों का प्रणयन किया है। डॉ. तिवाड़ी ने पारीक कुल के शलाका पुरूष के कृतित्व एवं व्यक्तित्व में अतीन्द्रिय यथार्थ को अनावृत्त किया है और यह सिद्ध किया है कि मंत्रद्रष्टा ऋषि की वाणी एक व्यक्ति की नहीं अपितु युगीन आत्मा तथा मानवता की वाणी है।'

ग्रंथ 6 खंडों में विभक्त होकर तिवाड़ीजी की जीवनयात्रा एवं पारीक समाज की संस्थाओं में उनकी सहभागिता की यादों के साथ उनके सर्जनात्मक साहित्य, उनके भारतीय संस्कृति के उद्‌गाता रूप की विवेचना के अलावा उनकी कृतियों की विवेचना तथा उन्हें प्रदत्त सम्मान एवं प्रशस्तिपत्रों का नयनाभिराम आकलन प्रस्तुत करता है।

एक व्यक्ति जो अपने लंबे जीवनकाल में साहित्य, समाज, संस्कृति तथा अन्यान्य रूपों में अपने सुकृत्यों के माध्यम से जो देन देता है उसका लेखाजोखा करने के लिए अभिनंदन ग्रंथों का प्रकाशन मूल्यवान है। ऐसे ग्रंथ न केवल किसी की स्मृति को ही स्मरणीय बनाते हैं अपितु प्रेरणा के सूत्रपात भी होते हैं।

1983 से 'चौमासा' अथक लूणा

लोकसंस्कृति की चातुर्मासिक पत्रिका 'चौमासा' कभी अलूणा नहीं गया। चौमासा तब से निरंतर पा ही नहीं रहा, उससे जुड़कर लेख-जड़ित भी हो रहा हूं। तब डॉ. कपिल तिवारी थे और भोपाल के उस संस्थान का नाम आदिवासी लोककला परिषद था। कपिलजी के साथ बसंत निरगुणे भी सक्रिय थे। इस परिषद से कई उत्कृष्ट किंतु सर्वथा उचित मूल्य के सर्व सुलभ होने वाले निरंतर उल्लेखनीय प्रकाशन भी आते रहे। चौमासा के माध्यम से लोककला-संस्कृति क्षेत्र के अनेक विद्वानों से मेरा परिचय बना और उसमें उनके द्वारा लिखित लोकज्ञान संपदा ने भी मुझे बूंद-समुंद बनाया।

चौमासा यानी चार माह के काल को, वर्षा ऋतु को भी कहते हैं। राजस्थान में विरहिणियां अपने पति को परदेश से बुलाने पर जो गीत गाती हैं उनमें चौमासा में प्रिय के आगमन नहीं होने की छटपटाहट, कसमसाहट के कई गीत हैं। एक गीत की इन पंक्तियों ने मुझे बड़ा दगदग किया जब मैंने अल्लाजिलाईबाई, गवरीदेवी और नारायणीबाई, जानकीबाई के विरहकंठी स्वरों से सुना- 'राजरे बिना रे, आपरे बिना रे चौमासो अलूणो जाय।' प्रिय के नहीं आने पर एक नहीं, कितने ही चौमासे अलूणे, निरर्थक निकल गये।

लेकिन यह चौमासा नामक पत्रिका नित नई लोकजनित जानकारियों से शहदी सामग्री लेकर मिलती रही। यह क्रम बना हुआ है जबकि अब वहां न

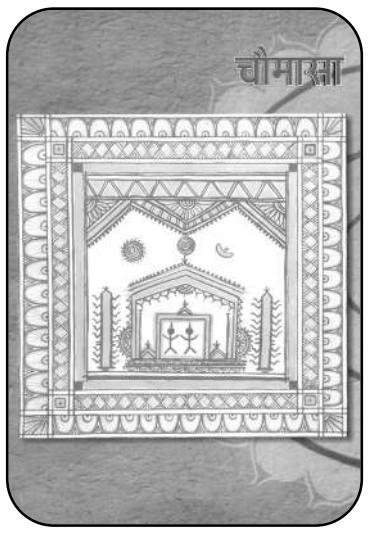

कपिलजी हैं, न बसंतभाई और वह परिषद भी अपना नाम-रूप बदलकर आदिवासी लोककला एवं तुलसी अकादमी और अब आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी के रूप में श्यामला हिल्स के जनजाति संग्रहालय के साथ बहरहाल बनी हुई है। सुखद पक्ष है कि अब भी अशोक मिश्र वहीं हैं जो तब भी थे। अब परिपक्व अनुभवी और चौमासा के रंगबोधक संपादक हैं सो उसी नींव के कंगूरों पर कंगूरे देने की महती साधकी लिए हैं।

चौमासा का यह संयुक्तांक वर्ष 32 का 98-99 वां अंक है जो जुलाई 15 से लेकर फरवरी 2016 को नापता है। विवाह पर केंद्रित 228 पृष्ठों की सामग्री में 23 विद्वानों ने विविध अंचलों में प्रचलित वैवाहिक रीतियों, संस्कारों, परंपराओं, लोकाचारों तथा अनुष्ठानों पर बड़ी रोचक, रचगच, सुहानी तथा अजब-अनूठी सामग्री दी है जिसके आधार पर शोध के कई नये विषय बनाये जा सकते हैं।

इससे यह निष्कर्ष भी सर्वमान्य हो जाता है कि सभी संस्कारों में विाह संस्कार सर्वाधिक अनिवार्य और अबलक है। शुद्ध लोकसंस्कृति की सर्वमान्य संगतिपरक ऐसी पत्रिका कोई और देखने में नहीं आई। संपादक अशोक मिश्रजी के मुंह में घी-शक्कर।

म.भा.

मलेरिया मुक्ति के लिए पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप की घोषणा

उदयपुर। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय भारत सरकार, मध्यप्रदेश शासन एवं सनफार्मा (रायटर्स: सनडॉटबीओ, ब्लूमबर्ग : सनप इन, एनएसई : सनफार्माए बीएसई : 524715, सन फार्मास्युटिकल इण्डस्ट्रीज लि. एवं इसकी सहायक कम्पनियों द्वारा मलेरिया मुक्त भारत और निवारक स्वास्थ्य में अन्य नवाचार के लिए भारत की पहली पब्लिक-प्राइवेट-पार्टनरशिप के समझौते की घोषणा की गई। यह घोषणा डॉ. सौम्या स्वामीनाथन, महानिदेशक-आईसीएमआर, प्रमुख सचिव स्वास्थ्य श्रीमती गौरी सिंह मध्यप्रदेश और दिलीप संघवी, प्रबंध निदेशक, सनफार्मा द्वारा निवारक स्वास्थ्य उपायों को बढ़ावा देने में पब्लिक-प्राइवेट क्षेत्र के सहयोग से एक अनूठे प्रयास के रूप में की गई। पब्लिक-प्राइवेट-पार्टनरशिप हितधारक रोग पर निगरानी और निरीक्षण उन्मूलन प्रदान करने के लिए प्रबंधन एवं तकनीकी समितियों की स्थापना के द्वारा संयुक्त रूप से मलेरिया नियंत्रण और उन्मूलन कार्यक्रम को शुरू करेंगे।

परंपरा और आधुनिकता का प्रवाह

-डॉ. कहानी भानावत-

जब-जब, जहां-जहां विभिन्न समाज, वर्ग और राष्ट्र के व्यक्ति मिलते हैं तो एक-दूसरे पर किसी न किसी रूप में कोई न कोई प्रभाव अवश्य पड़ता है। मेलमिलाप की यह प्रवृत्ति ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है त्यों-त्यों प्रभाव का दायरा भी विस्तृत होता जाता है। भारत राष्ट्र की ही बात करें तो यह समझना बहुत आसान है कि आजादी के पहले जब अन्य राष्ट्रों से हमारा बहुत अधिक संपर्क नहीं था और न आवागमन ही था तब हमारे ऊपर पाश्चात्य देशों का प्रभाव नहीं के बराबर पड़ा परंतु आजादी के बाद जब इस ओर हमारा ध्यान अधिक गया तो यह स्वाभावित था कि हम उनसे प्रभावित हों।

यह प्रभाव रहन-सहन, खान-पान और ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों में बहुत पड़ा। सर्वाधिक प्रभाव तो फैशन का ही पड़ा। सरकार की सांस्कृतिक आदान-प्रदान की योजनाओं ने भी इसमें बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। विभिन्न देशों से यहां आने वाले पर्यटकों की देन भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। जो भारत हजारों बरसों की अपनी परंपराओं की कोठरी में सुरक्षित रहा वह आजादी के बाद ही इतना कुछ बदल गया कि इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

अर्द्धशताब्दी पूर्व का यदि कोई भारतीय जो यहां की क्रमश: होती रही प्रगति का साक्षी नहीं रहा यदि वह अचानक यहां आ जाय तो उसे यह विश्वास ही नहीं होगा कि यह वही भारत है जो उसके समय में था। परिवर्तन का एक पक्ष तो अच्छा यह है कि हम अपनी बंधबंधाई परंपराओं से कुछ मुक्त हुए और अपने ढंग से सोचने-समझने और कुछ करने का हमारा अपना नजरिया बना और एक सीमित दायरे से हम विलग हुए। ज्ञान के विभिन्न द्वार खुले। वैज्ञानिक गति-प्रगति से हमारे सोचने समझने का दायरा विस्तृत हुआ और विश्व में जहां भी जो कुछ उन्नति हो रही, उसका लाभ मिलने लगा।

परन्तु इसका दूसरा हश्र यह हुआ कि जो परंपरायें हमारे अपनेपन की, अपने ठेठ जीवन की, भारतीयता की पहचान देती थी उनमें पाश्चात्य प्रभाव की एक नई हलचल पैदा हुई जिससे हमारी अपनी निजी पहचान का स्वरूप परिवर्तित होने लग गया। सरकार द्वारा विदेशों में आयोजित भारत महोत्सव ने जहां भारतीय संस्कृति की अमिट छाप छोड़ी वहां हमारी आचंलिक और प्रांतीय सांस्कृतिक परंपराओं की विशिष्ट छाप

छूटी। धर्म और अनुष्ठान से जुड़ी लोककलाओं में प्रयोगधर्मिता के रंग जुड़े। अनेक कलाकार बदले, धर्म और अनुष्ठान बदले, दर्शक बदले और वह जमीन बदली जहां बड़ी आत्मीयतापूर्वक एक विशेष अनुष्ठान से इनके प्रदर्शन दिये जाते थे। इन कलाओं को मस्तिष्क का कला-तंत्र अधिक मिला परंतु हृदय की भावनात्मकता और जीवन की रसानुभूति का संकुचन भी देखने को मिला।

तब हम यह कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि बिजली की उपलब्धि हमारे लिए महान आश्चर्यकारी सिद्ध होगी। यातायात के साधनों का ऐसा द्रुतगामी विकास होगा कि हम न कुछ समय में एक से दूसरे राष्ट्र में पहुंच जायेंगे और संचार के त्वरित उपकरणों द्वारा हम घर बैठे किसी भी राष्ट्र से बातचीत कर सकेंगे। टी.वी. ने तो जैसे एक नया संसार ही हमें दे दिया है और अब कम्प्यूटर क्रांति जो गुल खिला रही है उसका तो कहना ही क्या।

पुरूष 'बाबू साहब' बन गया तथा महिला 'मेडम' और 'मेम साहब' बन गई। गांव की चौपाल सूनी हो गई। नानी-दादी की कहानियां खत्म हो गई। पारिवारिक रिश्ते नाते आत्मीयता के सूत्र से छिटक गये। आनंद और अनुरंजन के तौरतरीके बदल गये। विवाह पर जो मांगलिक गीत महिलाएं गाती थीं उनकी बजाय अब युवक सड़कों पर डिस्को प्रदर्शन करने लग गये। पहले विवाह को जीवन का पवित्र बंधन माना जाता था और माता-पिता ही अपने पुत्र को गृहस्थ जीवन में प्रवेश कराते थे। पूरा समाज इकट्ठा होता था। अब यह सब कुछ बदल गया है। पश्चिम का प्रभाव इस हद तक फैला कि आज का युवक प्रेम विवाह याकि अदालती विवाह की ओर उन्मुख हुआ लग रहा है। इससे संयुक्त परिवार की सामाजिकता हिली। बूढ़े मां-बाप कई प्रकार की समस्याओं से ग्रसित होने लगे। तब सीनियर सिटीजन का महत्व प्रतिपादित हुआ।

इस प्रकार परंपरा और आधुनिकता का चोली दामन सा संबंध है। किसी युग और किसी काल में ऐसा नहीं हुआ जब परंपरा और आधुनिकता का मेल नहीं रहा हो। परंपरा आधुनिकता का स्पर्श पाकर ही जीवित रहती है और आधुनिकता परंपरा विहीन कभी नहीं हुई। एक-दूसरे पर कम ज्यादा प्रभाव हो सकता है किंतु दोनों एक-दूसरे से ग्रहण करते हैं और अपना अस्तित्व बनाये रखते हैं। ऐसा भी होता है जब कोई परंपरा आधुनिकता का किंचित भी ग्रहण न करे तो फिर उसकी आत्मा धीरे-धीरे क्षरित होती हुई निर्जीव बन जाती है और अपना अस्तितव खो बैठती है। यही स्थिति आधुनिकता के साथ देखी जा सकती है। भारतीय परिवेश में हम परंपरा और आधुनिकता दोनों को अलग-थलग नहीं कर सकते। भारतीय जीवनचक्र परंपरा और आधुनिकता का संगी बन युगयुगीन अस्तित्व बनाये हुए है।

पिता ने कहा था जब मैं नहीं रहूंगा

-डॉ. मंजु चतुर्वेदी-

पिता ने कहा-
देखना
एक दिन मैं नहीं रहूंगा
सदेह देखने के लिए तुम्हें
तुम्हारी जिंदगी में उतार-चढ़ाव
तुम्हारे सुख-दुख
आशाएं-निराशाएं
खुशियां और
विपत्तियों के बादल।
नहीं रहूंगा
सारे संवादों के लिए।
कपाट सब बंद होंगे
निरभ्र आकाश में
कहां तलाशोगे मुझे ?
पिता ने कहा-
मृत्यु दबे पांव आती है
बिल्ली की तरह
न जाने कब झपट्टा मार ले।
तुम्हें जब याद आए
मेरा नहीं होना
मेरी डायरी के पृष्ठ खोलना
अंधेरा पार हो जायेगा
और देखना
असंख्य किरणों से सजा सूर्य
तुम्हें मुझसे मिला देगा।

डॉ. मंजु चतुर्वेदी ने यह कविता अपने पिताश्री नंद चतुर्वेदी की 93वीं जयंती पर आयोजित कवि गोष्ठी में पढ़ी थी जो सर्वाधिक सराही गई। एक सफल कवि, कथाकार तथा समालोचक के रूप में ख्यात मंजु संप्रति उदयपुर के मीरां कन्या महाविद्यालय में उपप्राचार्य हैं।

शब्द-पंख से रोशनी बिखेरने वाले कवि का पुण्य स्मरण

उदयपुर। प्रसंग संस्थान और वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा के संयुक्त तत्वावधान में देश के वरिष्ठ कवि, समालोचक एवं चिंतक नंद चतुर्वेदी को उनके 93वें जन्म दिवस पर काव्यगोष्ठी द्वारा स्मरण किया गया।

प्रसंग संस्थान के अध्यक्ष डॉ. इन्द्रप्रकाश श्रीमाली ने कहा कि नंद चतुर्वेदी शब्द-

पंख से रोशनी बिखेरने वाले ऐसे समर्थ कवि थे जो गैर बराबरी के विरूद्ध समानता की आवाज बुलंद करते रहे। प्रखर वक्ता के साथ-साथ अपनी सशक्त रचनाओं द्वारा वे सदैव वंचितों के पैरोकार रहे।

इस अवसर पर नंद चतुर्वेदी की पुत्री डॉ. मंजु चतुर्वेदी ने भावपूर्ण कविता 'पिता ने कहा था जब मैं नहीं रहूंगा' प्रस्तुत कर भावुक श्रोताओं को अश्रु विगलित कर दिया। गोष्ठी-अध्यक्ष किशन दाधीच ने 'जब तुम जाओगे' गीत पढ़ा। मुख्य अतिथि प्रीता भार्गव ने नंद बाबू के लिखे गीत को काव्य-भाषाओं में उच्चरित किया। डॉ. भगवतीलाल व्यास ने 'लोग' शीर्षक कविताओं का वाचन किया।

श्रीमती मनोरमा, आदर्श, डॉ. रजनी, डॉ. चंद्रकांता बंसल, डॉ. मंजु त्रिपाठी, डॉ. इन्द्रा जैन, अब्दुल जब्बार, डॉ. मुश्ताक 'चंचल', डॉ. रजनी कुलश्रेष्ठ, डॉ. सर्वतुन्निसा एवं लालदास 'पर्जन्य' ने अपनी उद्बोधनी काव्यधाराओं से गोष्ठी को स्मरणीय बनाते गर्व महसूस किया कि वे सब नंद-युग के सम्मानित साथी रहे हैं। गोष्ठी में अनुराग चतुर्वेदी, डॉ. ज्योतिपुंज, डॉ. वीना सनाढ्य, हबीब अनुरागी, डॉ. गरिमा, आनंद चतुर्वेदी, श्रीमती किरण, श्रीमती अनुभा, गोविंद त्रिपाठी एवं डॉ. अरूण चतुर्वेदी ने नंद बाबू के व्यक्तित्वजनित कृतित्व के अनेक अनछुए प्रसंगों की चर्चा कर साहित्य में उनके अवदान को अविस्मरणीय बताया।

रिचर्ड बरुआ रैडिसन उदयपुर के नये महाप्रबंधक बने

उदयपुर। रैडिसन उदयपुर ने चार महीने की अल्प अवधि में शहर में लोकप्रियता हासिल कर ली है और यह अच्छे भोजन तथा मेहमाननवाजी के लिए

जाना जाता है। होटल ने हाल में रिचर्ड बरुआ को अपना नया महाप्रबंधक बनाया है।

रैडिसन उदयपुर के महाप्रबंधक रिचर्ड बरुआ ने कहा कि हॉस्पिटैलिटी कारोबार में अपनी सुविज्ञता और कार्लसन रेजीडोर जैसे ब्रांड के समर्थन से रैडिसन उदयपुर निश्चित रूप से उदयपुर शहर में हॉस्पिटैलिटी के लिहाज से सर्वश्रेष्ठ होगा। हमारी योजना अभिनव आईडिया पेश करने की है ताकि अतिथियों से अच्छी तरह जुड़ा जा सके और अपने होटल को हम शहर का नंबर वन अपस्केल बिजनेस होटल बना सकें।

उन्होंने कहा कि नई पीढ़ी को लक्ष्य करने के लिए होटल युवाओं के लिए 'फन' ईवनिंग्स का आयोजन कर रहा है। इन गतिविधियों से युवाओं को होटल में रहते हुए घर जैसा अहसास होगा। होटल की योजना भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय फूड फेस्टिवल आयोजित करने की है ताकि अतिथि भिन्न-भिन्न किस्म के व्यंजनों का लुत्फ उठा सके।

इसके अलावा, महिलाओं के लिए कुकरी कक्षाओं का भी आयोजन किया जाएगा। उन्होंने कहा कि रैडिसन उदयपुर में बैंक्वेट के लिए काफी जगह है और यह शहर के विशिष्टजनों की पार्टी की जगह की जरूरत पूरी करने के लिए है। यहां अनूठी कांफ्रेंसिंग बैंक्वेटिंग सुविधा शुरू की जाएगी। यही नहीं, होटल सीएसआर पहल के प्रति अपने प्रयास भी जारी रखेगा। श्री बरुआ ने कहा कि रैडिसन उदयपुर आकर्षक स्थलों फतहसागर, पीछोला सहित अन्य पर्यटक स्थलों के करीब हैं। इस होटल के मालिक सौरभ टाक हैं।

वॉशिंगटन एप्पल वेगन टूर उदयपुर पहुंचा

उदयपुर। वॉशिंगटन एप्पल कमीशन सेबों की ताजगी को वॉशिंगटन के बागों से उदयपुर शहर लेकर आया है। देशव्यापी अभियान एप्पल वेगन टूर के साथ वॉशिंगटन एप्पल कमीशन ने उदयपुर शहर में उपभोक्ताओं के लिए ढ़ेर सारी मनोरंजक और आकर्षक

गतिविधियों का आयोजन किया।

वॉशिंगटन एप्पल कमीशन के भारतीय प्रतिनिधि कीथ सुंदरलाल ने कहा कि एप्पल वेगन टूर तीन माह लंबा रोड शो है, जो भारत में 70 शहरों की यात्रा कर रहा है। इस रोड शो के द्वारा ग्राहकों को वॉशिंगटन एप्पल्स की विभिन्न किस्मों का अनुभव लेने का मौका दिया जा रहा है। उदयपुर के रोड शो में जो प्रतिभागी शामिल हुए उन्होंने 'बिल्ड द एप्पल टॉवर', 'क्विक क्विज़ ऑन वॉशिंगटन' और 'स्पॉट द एप्पल' जैसी प्रतियोगिताओं में हिस्सा लिया।

निधन : हाथी रे होदे परवत डाकिया

हमारे यहां सपनों का बड़ा महत्व स्वीकारा गया है इसलिए स्वप्न शास्त्र भी लिखे गये। यों तो अधिकांश सपने व्यक्ति की दैनिक चर्या और मनोभावनाओं से संबंधित होते हैं किंतु कभीकभाक जो विशिष्ट सपने आते हैं उनका अर्थ कई तरह के संकेत दे जाता है। सपनों से जागकर लोगों ने खजानों की तलाशी ली और अकूत धन-लाभ लिया। वैज्ञानिकों द्वारा जो बड़ी उपयोगी खोजें हुई हैं उनमें भी सपनों का मार्गदर्शन बड़ा प्रभावी रहा। जैन समुदाय में तो विवाह-प्रसंग पर सुबह के समय तीर्थंकरों से जुड़े सपने गीत गाये जाते हैं जो विवाह के मंगल ही सिद्ध नहीं होते अपितु परिणयसूत्र में आबद्ध होने जा रहे लाड़ा-लाड़ी के लाड़-मंगल के, उनके भावी गृहस्थी जीवन के सुनहले सुजलाम सुफलाम मलयज शीतलाम भी होते हैं।

उदयपुर अंचल के कभी पिछवाड़ गांवों में बंबोरा का नाम आगेवाण था। यहां के रेजे प्रसिद्ध थे। कभी उबड़खाबड़ कांटेदार जंगलों और कबाड़खाते मगरे-मगरियों को पार कर ही वहां पहुंचा जाता था। लारेवाला साथ नहीं होता तो बीच रास्ते में ही राहगीर लूट का शिकार हो जाता था। यहां का जल वारा यानी नारू रोग के लिए आमबाण था। मैं इन सब परिस्थितियों का आंख देख अनुभवी रहा हूं। अस्तु।

इसी बंबोरा में रोड़ी में रतन की तरह डॉ. दिलीप धींग का परिवार चिन्हित हुआ। इस धर्मनिष्ठ परिवार में दिलीप के पिता स्मृतिशेष कन्हैयालाल मेरे गांव कानोड़ में 8वीं तक दो-तीन वर्ष मेरे अध्ययनकाल के सहपाठी रहे जिनसे तब की जुड़ी कड़ियां दिलीप के कारण और अधिक घनिष्ट बेबिखरी बनी हुई हैं।

सबसे अ%छा कार्य दिलीप का मैं यह मानता हूं कि उन्होंने अपने पिताश्री के नाम पर हिंदी-राजस्थानी के श्रेष्ठ रचनाधर्मी को पुरस्कृत करने का सिलसिला प्रारंभ किया। पहलीबार और उसके बाद भी लगातार मैं इस समारोह का दर्शी रहा। इसके पीछे दिलीप की माता संस्कारशील जैनधर्मी साधिका सुश्राविका सुरत्ना उमराव देवी का

मनोयोग रहा। इन्हीं समारोहों में मेरी उनसे लगभग भेंट होती रहीं। उनका साध्वीमना सहज जीवन कइयों को प्रेरित करता रहा।

साधु-संतों का सान्निध्य, उनकी सेवाचर्या तथा व्याख्यान श्रवण उनकी जीवनचर्या का आवश्यक भाव था। नित्य सामायिक और पाक्षिक प्रतिक्रमण करने के अलावा धर्म स्थानकों में महिला-समुदाय के साथ गाये जाने वाले सैकड़ों लोकधर्मी गीत, भजन, सिलोके, तपस्या तथा सपने, चौबीसियां, थोकड़े, स्तुतियां, श्रुतियां, गर्भ चिंतारणियां, ढालें, पखी गीत, ब्यावले कंठासीन थे।

मैंने इस धर्मी लोकजनित साहित्य का विपुल संग्रह किया इसलिए एक दिन पूछ बैठा कि यह सारी संपदा उन्होंने कहां से ग्रहण की और कैसे यह खजाना सदैव अकूत-अखूट ही बना रहता है? कौन इसमें कुछ जोड़ता-घटाता है? मुख्य रूप से क्या वे भी अवसरानुकूल कुछ जोड़ने का विनीत उपक्रम करती हैं? मेरे इस कथन ने उन्हें गंभीर सोच में डाल दिया। अपने बारे में उन्हें कुछ कहना नहीं था लेकिन सच को छिपाना भी उन्हें असत्य का भागी बनना लग रहा था सो वे तिनके को सहारा करती मात्र यही बोलीं- 'मेरी क्या बिसात जो इस पुण्यशाली साहित्य में अपना योगदान कर सकूं किंतु जब कभी आ पड़ती है तो गाड़ी रूकने नहीं देकर अपनी आंकड़ी बिठा देने का प्रयत्न करती हूं।'

ऐसी धर्माराधिका उमराव बाई का जिन्हें सब 'बाईजी' नाम से संबोधित करते थे, 73 वर्ष की उम्र में 16 अप्रेल को निधन हो गया। निधन के सप्ताह पूर्व उन्हें स्वप्न आया कि वे एक विशाल हाथी पर सवार हो पर्वत चढ़ रही हैं। ऐसे ही कुछ प्रसंग तीर्थंकरों के सपनों में भी आते हैं जो उनके साधक जीवन और तीर्थंकर पद प्राप्ति के सुमंगलकारी बोध के सूचक कहे गये हैं। उमरावबाईजी का यह स्वप्न भी उनके आध्यात्मिक तथा निष्ठाजनित धार्मिक जीवन की सद्गति का पूर्वाभास ही था।

उमरावबाईजी ने परिवार के साथ-साथ सामाजिक सरोकारों से सदा जुड़ाव रखा फलस्वरूप कई संस्था-प्रतिष्ठानों ने समय-समय पर उनका लोकमान सम्मान किया। उदयपुर की साहित्यिक संस्था युगधारा द्वारा आयोजित समारोह में उन्हें सृजन प्रेरिका का सम्मान देकर मैं स्वयं और साहित्यसेवी विपिन जारोली भी कम गौरवान्वित नहीं हुए। इसी प्रकार युवाचार्य मधुकर मुनि के जन्म शताब्दी समारोह में उन्हें जैन कांफ्रेंस की महिला शाखा द्वारा श्राविका रत्न सम्मान प्रदान किया गया लेकिन इनसे भी अधिक बड़ी देन उनकी यही कही जायेगी कि उन्होंने अपने पुत्र दिलीप धींग की साहित्यिक विकास यात्रा में बुनियादी भूमिका संस्कारित की।

दिलीप के अग्रज सुरेश और अनिल हैं। दो बहिनों में सबसे बड़ी आशा तथा सबसे छोटी रेखा है। चाचा शांतिलाल का परिवार भी उतना ही धर्मनिष्ठ और समाज में अग्रणी आदर्श भूमिका लिए है। **म.भा.**

शीघ्र प्रकाशित

विश्वप्रसिद्ध हल्दीघाटी के निकट बसे उदयपुर संभाग के छोटे से गांव मोलेला के कुम्हार परिवारों द्वारा निर्मित लोक देवी-देवताओं की माटी की मूर्तियों पर पहली बार लोकधर्मी समाज शास्त्रीय अध्ययन। आर्यावृत्त संस्कृति संस्थान, दिल्ली से प्रकाशित।

''यदाकदा ही ऐसी पाण्डुलिपियां सामने आती हैं जिन्हें आप एक बैठक और विशेष एकाग्रता के साथ पढ़ लेते हैं। इस पाण्डुलिपि को मैं एक ही बैठक में मात्र पचास मिनिट में पढ़ गया। मुझे आश्चर्य है कि इतने पृष्ठों की पूरी पाण्डुलिपि कैसे पढ़ ली। जब तक आप स्वयं इस पुस्तक को नहीं पढ़ेंगे तब तक 'कहानी का करिश्मा' और मोलेला की मिट्टी का मतलब आपकी समझ में नहीं आयेगा। पुस्तक की पाठकीयता को कहानी ने गुदगुदाया है। एक स्मित, एक मुस्कराहट चेहरे पर लाइये और मोलेला की मिट्टी को माथे पर लगाइये। शायद आपके ललाट के लेख सुगंधित हो जायें।''

-बालकवि बैरागी द्वारा लिखित पुस्तक की भूमिका से

मोलेला की भूमि सब भूमि से अनूठी, अलौकिक तथा अनन्या है। एक छोटे से गांव ने अपनी माटी से देवी-देवताओं की रूप-छवि देकर जो कमाल दिखाया वह अभूतपूर्व करिश्मा है।

मेरे द्वारा किये गये लोककला शिल्पों के विषय-वैविध्य का कहानी पर गहरा प्रभाव पड़ा। जाने-अनजाने वह इन सारे कार्य-संदर्भों की साक्षी बनी। घर में यही-यही वातावरण था। भांति-भांति की लोकविधाओं से जुड़े निष्णात कलाकारों को घर पर आमंत्रित करना, उनसे उनकी विधाओं के बारे में समग्रत: जानकारी लेना, उनके द्वारा देखी, सुनी अन्य विधाओं और उनसे जुड़े कलाकारों की पूछताछ भी खूब इकट्ठी की गई। कहानी निरन्तर लगटग साथ बनी रहती। चाय-पानी द्वारा उनका सत्कार करते-करते वह भी पूरी दिलचस्पी से उनकी बातों को सुनती। उनकी कला-प्रस्तुति को अपने में अंगरस करती और उनके चले जाने के बाद जो सवाल उसके मन-मस्तिष्क में उपजते उनका समाधान पाती।

मोलेला और वहां की माटी की बनी मूरतों के साथ भी कहानी की रसज्ञता के पीछे यही भाव-ताव है। पहली बार जब मैं मोलेला गया तो अपने साथ धर्मराज की बड़ी प्रतिमा लाया। हम लोग जीप लेकर गये थे। जीप में किसी मूर्ति को लाना उसके टूटने, भागने, खंडित होने और तड़ पड़ने का अंदेशा था सो मैं अपनी गोदी में कुछ कपड़े बिछाकर खड़ी अवस्था में वह मूर्ति लाया जो अब भी मेरे घर हर आने वाले को प्रथम दरसन देती है। यह पुस्तक कहानी के साथ मेरी तरंग यात्रा और उसकी अन्तरंग यात्रा का दरसाव है।

-डॉ. महेन्द्र भानावत द्वारा लिखित पुस्तक के पधारो म्हारे देस से

दुग्गल बने इण्डिया लेड-ज़िंक डवलपमेंट एसोसिएशन के अध्यक्ष

उदयपुर। भारत की सबसे बड़ी और दुनिया की अग्रणी जस्ता उत्पादक कम्पनी हिन्दुस्तान ज़िंक के मुख्य कार्यकारी अधिकारी एवं पूर्णकालिक निदेशक सुनील दुग्गल को इण्डिया लेड-जिंक डवलपमेंट एसोसिएशन के अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया गया है। यह निर्णय नईदिल्ली में आयोजित इण्डिया लेड-जिंक डवलपमेंट एसोसिएशन की 23वीं वार्षिक आम बैठक मे लिया गया।

सुनील दुग्गल को परियोजना प्रबन्धन सचांलन, मैन्यूफैक्चरिंग इण्डस्ट्री, मानव संसाधन एवं सप्लाई चैन जैसे कई क्षेत्रों में 32 वर्ष कार्य करने का अनुभव है। श्री दुग्गल ने सस्टेनेबलिटी एवं सुरक्षा के प्रति जागरूकता की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तथा खनन और प्रचालन की नई तकनीकों, मशीनीकरण और स्वचालित प्रचालन गतिविधियों तथा हिन्दुस्तान ज़िंक के खनन, प्रचालन एवं रिफाइनरी इकाइयों के विस्तार संबंधी गतिविधियों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। श्री दुग्गल 2010 में ज़िंक में एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर के पद पर नियुक्त हुए थे तथा 2012 में मुख्य प्रचालन अधिकारी बने। उन्होंने 2014 में ज़िंक के उप-मुख्य कार्यकारी अधिकारी तथा 1 अक्टूबर, 2015 में मुख्य कार्यकारी अधिकारी का पदभार सम्भाला।

टोयोटा की इनोवा क्रिस्टा लांच

उदयपुर। टोयोटा किर्लोस्कर मोटर ने इस साल के सबसे अधिक प्रतीक्षित उत्पाद नए रूप-रंग में सजी इनोवा को इनोवा क्रिस्टा के नाम से लांच किया है। 'कल्पनाओं से उत्प्रेरित और नवाचार से उर्जित' ''ट्रीगर्ड बाय इमेजिनेशन एंड फ्यूल्ड बाय इनोवेशन'' इनोवा क्रिस्टा का इसी साल ऑटो एक्स्पो-द मोटर शो 2016 में अनावरण किया गया था।

टोयोटा किर्लोस्कर के मैनेजिंग डायरेक्टर अकितो ताचीबाना ने कहा कि 13,83,677 रु. से 20,77,930 रु. कीमत (एक्स-शोरूम मुंबई) की श्रेणी में रखी गई इस नई इनोवा क्रिस्टा की बुकिंग प्रारम्भ कर दी गई है और इसका वितरण 13 मई से शुरू हो जाएगा। ऑटोमैटिक ट्रांसमिशन में इनोवा किस्टा दो ग्रेड्स जेडएक्स और जीएक्स तथा मैन्युअल ट्रांसमिशन में चार ग्रेड्स जेडएक्स, वीएक्स, जीएक्स और जी में उपलब्ध है। नई इनोवा क्रिस्टा को एकदम नई फ्रेम के साथ पहली बार 2.8 लीटर डीजल इंजन के साथ 6 स्पीड ऑटोमैटिक ट्रांसमिशन सहित बाजार में उतारा गया है। साथ ही यह एकदम नए 2.4 लीटर डीजल इंजन और 5 स्पीड मैन्युअल ट्रांसमिशन सहित भी उपलब्ध है। इनोवा क्रिस्टा, 2.8 लीटर 6 स्पीड ऑटोमैटिक ट्रांसमिशन वाले मॉडल में 174 पीएस का पॉवर है। यह 14.29 किमी/लीटर का माइलेज देती है, जो कि इस वर्ग में इसका सबसे अच्छा प्रस्तुतीकरण है। वहीं 2.4 लीटर 5 स्पीड मैन्युअल ट्रांसमिशन वाले मॉडल में यह 15.10 किमी/लीटर का माइलेज देती है। अकितो ताचीबाना ने कहा कि एमपीवी श्रेणी में पहली बार भारत में लांच होने के बाद से अब तक इनोवा ने इस श्रेणी में नंबर 1 की स्थिति पर अपना दबदबा कायम रखा है।

टोयोटा किर्लोस्कर मोटर प्रा. लि. के डायरेक्टर और सीनियर वाइस प्रेजिडेंट (सेल्स एन्ड मार्केटिंग) एन. राजा ने कहा कि टोयोटा, भारत में एमपीवी सेगमेंट में सबसे पहले क्वालिस और फिर इनोवा के रूप में अपने लॉंच के समय से ही सबसे आगे रही है।

11 सालों तक देश की नंबर एक एमपीवी का खिताब पाने के बाद, हम नई इनोवा क्रिस्टा लेकर आये हैं। नि:सन्देह, यह भारत का सबसे प्रतीक्षित लॉंच है जिसका सबको बेसब्री से इंतज़ार था। हम उन सभी निष्ठावान ग्राहकों को धन्यवाद देते हैं जिन्होंने अपना निरंतर सहयोग और भरोसा, ब्रांड इनोवा में बनाए रखा। इनोवा क्रिस्टा को गहन सोच-विचार के बाद बनाए फीचर्स और हर डिटेल पर पूरा ध्यान देकर बनाया गया है। यह टोयोटा की क्रांतिकारी तकनीक और सॉफेस्टिकेशन को एक साथ जोड़ती है।

'मैक्सिमम कूलिंग एट मिनिमम प्राइस' की पेशकश

उदयपुर। डिजीवर्ल्ड ने बढ़ती गर्मी के मद्देनज़र अपने एयर कंडीशनर्स की व्यापक रेंज पर खास बचत ऑफर 'मैक्सिमम कूलिंग एट मिनिमम प्राइस' की घोषणा की है। उदयपुर,जयपुर एवं जोधपुर के उपभोक्ता इस सीज़न में मात्र 2,099 रु में नया एयर कंडीशनर घर ला सकते हैं। कंपनी आसान भुगतान के साथ कम्प्रेसर पर पांच साल की वारंटी का ऑफर देती है। टेकनो कार्ट इण्डिया लि. के सीईओ संजय करवा ने कहा कि इस पहल में उदयपुर के क्रिकेट प्रेमियो के लिए भी विशेष ऑफर पेश किए गए हैं। इसके लिए टोल फ्री नम्बर 1800 1377 123 पर मिस्ड कॉल देनी होगी और भाग्यशाली उपभोक्ताओं को आईपीएल टिकट जीतने और अपने पसंदीदा खिलाड़ियों से मिलने का मौका मिलेगा।

देवेन्द्रभाई कर्णावट....

(पृष्ठ दो का शेष)

मैंने बधाई देने के साथ कहा कि आपने अब तक अणुव्रत पुरस्कार दिये ही दिये हैं और अब आप भी उसी पंक्ति में लेने वालों में हो गये हैं, यह अच्छा नहीं रहा। अच्छा यह होता कि इस पुरस्कार की बजाय आपकी निस्संदेह रही अकल्पनीय उपलब्धियों पर एक लाख की बजाय पांच लाख का कोई अन्य पुरस्कार मिलता। यह पुरस्कार अखिल भारतीय अणुव्रत समिति का सबसे बड़ा पुरस्कार होता और आप उसके प्रथम पुरस्कर्ता होते।

यह सुन उनकी आंखें डबडबा आईं। वे गंभीर सोच में पड़ गये। मेरी पीठ पर हाथ फेरते बोले- 'भानावत साहब, आपने बड़े गहरे मन से मुझे झकझोर दिया। ऐसी सलाह मुझे यदि पहले मिल जाती तो कितना अच्छा होता।' किसी ऐसे ही प्रसंग में 13 अगस्त 1987 को एक पत्र में उन्होंने मुझे लिखा-

प्रिय भानावत साहब,
सस्नेह वन्दे

स्नेह, विश्वास और अन्त:प्रेरणा से प्रेरित आपका पत्र मिला। आपने हृदय से लिखा और हृदय से प्रज्वलित हृदयोद्वेलित कर दिया। सचमुच यह आपकी लेखनी का कमाल है तदर्थ मेरी भी हृदय से बधाई स्वीकार करें। आपने अपनी बधाई में मुझे बहुत कुछ लिख दिया और भविष्य के लिए भी सावधान कर दिया। आपने एक दिशा दी है। मैं प्रयत्न करूंगा कि आपकी मानसिकता तक पहुंच सकूं और उसे आगे बढ़ा सकूं। सच तो यह है कि आगे-पीछे आप जैसे मित्र ही मेरे आत्मसंबल हैं जिनसे मैं कुछ पा सका और आगे भी पाता रहूंगा। मिलने की इच्छा और साथ खाने-पीने की इच्छा जग रही है। कभी मित्रों सहित इधर आयें, यह मेरा नम्र अनुरोध है। अनेक शुभकामनाओं के साथ

आपका सस्नेह
देवेन्द्र

देवेन्द्रजी साफ दिल के, शुद्ध मन के खरे व्यक्ति थे इसीलिए मेरी उनसे पटती थी। राजसमंद-कांकरोली कभी कमर मेवाड़ी के बुलावे पर तो कभी मोहन भाई के निमंत्रण पर जाना होता तब मैं नंदबाबू के साथ देवेन्द्र भाई से उनके निवास पर अवश्य मिलता। देवेन्द्र भाई जिस आंतरिक उत्साह और उल्लास से मिलते वैसा अन्यों में कम ही देखने को मिला। वे एक-एक कर परिवार के सभी सदस्यों को बुलाते और हमसे मिलवाते। भरपूर आतिथ्य करते। पलक पांवड़े बिछा देते। हम उठने को होते तो हमें पकड़-पकड़ कर बिठाते। परिवार की कुशलक्षेम पूछते। साहित्य की, सृजन की चर्चा करते। अपनी सुनाते और रूंधे गले से, तर आंखों से हमें विदा करते।

देवेन्द्रजी से हम उन दिनों भी मिले जब उनकी नेत्र ज्योति क्षीण हो गई थी। कान बहुत कम सुन पा रहे थे और पहचान भी लबोलब नहीं रह गई थी। हम निराश मन से भारी हो लौटे।

एकबार मैंने देवेन्द्रजी के संबंध में 'सुजस' में एक आलेख लिखा। यह कोई बड़ा आलेख नहीं था। उसमें मैंने लिखा- 'आचार्य तुलसी और उनके अणुव्रत ने देवेन्द्रजी को एक नया मोड़ दिया। यह मोड़ देवेन्द्र भाई के अंतर और बाहर विविध आयामों में फला। अणुव्रत के पदयात्री के रूप में देवेन्द्रजी ने जगह-जगह अणुव्रत का अलख जगाया। विचार परिषदों की स्थापना की। गोष्ठियां आयोजित कीं। संगोष्ठियां बुलाईं। अखिल भारतीय अणुव्रत समितियां संचालित कीं। आचार्यश्री ने उन्हें 'अणुव्रत प्रवक्ता' बनाया और अंत में वे इस जय-विजय यात्रा के अणुव्रत पुरूस्कर्ता हुए। अपनी 60-70 की पकी फसल में उन्होंने जो कुछ किया वह सर्वत्र दिखाई दे रहा है। उनमें आज भी वही आग और ऊर्जा है जिसे वे अपनी धौंकनी से जरूरत के माफिक प्रज्वलित करते हैं। कभी तीव्र तो कभी ठंडी रखते हैं और वक्त आने पर जोर की फूंक देने में भी कोई कसर बाकी नहीं रखते।'

यह लेख पढ़कर उन्होंने लिखा- 'आपका हृदयग्राही एवं संक्षेप में प्रेरणात्मक लेख पढ़कर न सिर्फ मुझे आत्मसंबल मिला वरन् एक नवीनतम उत्साह का संचार भी हुआ। कभी-कभी छोटे मित्र भी बहुत बड़ा काम कर गुजरते हैं। वही आपने मेरे लिए किया है। इसके लिए मैं क्या लिखूं? मेरे पास कोई शब्द नहीं हैं। इच्छा होती है कि आपके साथ अधिक रहा जाय लेकिन मेरा स्वास्थ्य पिछले दिनों से लगातार बिगड़ा ही है। कभी मिलने पर बात करेंगे।'

(पोस्टकार्ड-19 दिसंबर 1994)

वर्तमान में व्यक्ति जब बहुत व्यस्त रहता है तब अपनी बहुत सारी बातें, मन की मुरादें वह भविष्य के लिए छोड़ता है लेकिन कल आता नहीं है और हर भविष्य वर्तमान बनता हुआ गुजर जाता है। रह जाती है तो केवल यादें, खट्टी-मीठी स्मृतियां, अच्छे-बुरे अनुभव, परिपक्व या फिर अपरिपक्व होते कामयाबी क्षण और कहे हुए शब्द, लिखे हुए अक्षर।

पत्र न केवल किसी के व्यक्तित्व और कर्मशील कर्मठता का आकलन देते हैं अपितु मानवता के, ज्ञान-विज्ञान के, नये शोधानुसंधान और संभावनाओं के गवाक्ष भी खोलते हैं। देवेन्द्रजी के पत्रों और समय-समय पर उनकी मिलन सरिता में भी उनकी जीवनधर्मिता और मुखर मैत्री की मिठास के कई महकते मधुरम मिलते हैं जो उनके कर्मक्षेत्र की कमनीयता के और मित्रों के प्रति आत्मीय मैत्री तथा अपनत्व के यारानापन की यादों के द्योतक हैं।

भला जो दे, न दे उसका भी

डॉ. मालती शर्मा

भीख मांगना, भिक्षाटन, मधुकरी, भारतीय संस्कृति की वर्ण व्यवस्था में जीवनयापन का आधार रही है विशेष रूप से ब्राह्मणों का धन भिक्षा कहा गया है। कवि नरोत्तमदास द्वारा 'सुदामा चरित' में कहा गया है-

'सिच्छन हौं सिगरे जग कौ,
तुम ताकौ कहां अब देती हो सिच्छा
जै जय कै परलोक सिधारत,
संपति की तिनको नहीं इच्छा।
मेरे लिए हरि कै पद पंकज,
बार हजारु ले देख परीच्छा
औरन कौन चाहिए बावरी,
बामन कौ धन केवल भिच्छा।।'

न जाने क्यों, जहां-तहां, 'भट्टजी' शब्द के साथ जुड़ा 'भट्ट भिक्षुक' शब्द मिलता है। सामान्य व्यक्ति भी कभी अपने जीवन में 'भीख मांगता' और 'भीख देता' है। हमारे सांस्कृतिक जीवन में भिक्षा डालना, भीख देना पुण्यप्रद कार्य है। भीख डालने के पुण्य कार्य के फल से जीवन के दुख दर्द, कठिनाइयां सरल होती, दूर होती हैं। प्रसव वेदना से व्याकुल बहू को सास उसकी जीवन चर्या में रही जो कमियां बताती है उसमें भिखारी को भीख डालना भी है-

'भीख भिखारी बहू तुम जायं डारी,
अब कैसे होय निस्तासै....'

दान देना, दान करना एक तरह से भीख देने का ही उच्चतर रूप है। भीख पाने वालों में भी कुछ याचक नहीं होते। भीख और भिखारियों के जीवन के अजीबोगरीब हैरतअंगेज कारनामों और मानवीय जीवनमूल्यों को चकित कर देने वाली मिसालों से भरा साहित्य तो है ही और आ भी रहा है सामाजिक रूप में। अपराध तक घोषित होने के बावजूद देशभर में सार्वजनिक स्थलों, मंदिरों में भीख मांगने वाले मिलते और उनसे मिलने वाले आशीर्वाद पर विश्वास आज भी समाज में जीवन का आधार बना हुआ है। भीख मिलने पर भिखारियों के मुख से आशीर्वाद तो झरते ही हैं।

आकाशवाणी के विविध भारती कार्यक्रम में आयोडीन नमक के विज्ञापन में गर्भवती महिला हष्टपुष्ट बच्चा पाने के लिए प्रति सप्ताह सवा रूपये का प्रसाद चढ़ाकर पुजारीजी का आशीर्वाद चाहती है और पुजारीजी इसके लिए युगानुरूप आयोडीन नमक खाना पकाने में उपयोग करने का उपाय बताते हैं।

कोई वक्त था जब ऐसे आशीर्वाद सुबह-शाम द्वार से भीतर तक घरों में जाती रसोई तक पहुंचती आवाजों में मिला करते थे। खंजरी, सारंगी, चिमटा, एक तारा, ढपली के मीठे स्वरों वालों के साथ किसी देवी-देवता के नाम की कीर्ति स्वरूप और किरपा का बखान करते मन की चिंता, उद्विग्नता मिटाते, कर्तव्यों की याद दिलाते गीत होते थे। कोई चिमटा बजाकर गाता-

'किरपा करो हनुमान
जन पर किरपा करो हनुमान
लाल लंगोटा हाथ में सोटा,
मुख में नागर पान, जन पर....'

तो कोई धनुषधारी राम का नाम ले मंगल कामना करता-

'धनसधारी राम ....
माई आंनद रहा'

तो कोई दैनदिन जीवन में पाप-पुण्य की जड़ और सबसे बड़ी 'तपस्या' और सबसे बड़ा 'पाप' बता जाता-

'दया धरम का मूल है,
पाप मूल अभिमान'

'सांच बराबर तप नहीं,
झूंठ बराबर पाप
जाके हिरदे सांच है,
ताके हिरदे आप।'

तो कभी इस संसार के जीवन की नश्वरता का संदेश रामजी के नाम के साथ भले के प्रतीक में देता चला जाता -

'हो रामजी, चारिदिना कौ मेला
उड़ि जायेगा हंस अकेला'

कई बार किसी के देवी छन्द से, भेंट के किसी चरण से पहाड़ों से जगदम्बे महारानी उतर आतीं-

'जगदम्बे महारानी
कैसीं बैठी विकट पहारन में
कैला दे महारानी
जै हो बस रहीं,
विकट उजारन में, जगदम्बे....'

यहां महाराष्ट्र में 'जोशी' कभी सुबह-सुबह, घर-घर दिनभर का भविष्य बताने आते। अभी भी कहीं-कहीं आते हैं। महाशिवरात्रि के व्रत और रात्रि जागरण के सुबह गुसाई भैरोनाथ, सड़कों, गलियों में मूंग की दाल चावल का भात मांगते, बम भोले-भोले-भोले पुकार लगाते घूमते थे। सारंगी पर महादेव ब्याहला गाते भीख मांगते जोगी विश्व दाम्पत्य के प्रतीक अर्ध नारीश्वर शिव-पार्वती की गाथा घर-घर पहुंचा देते थे।

और ये आवाजें कभी कहीं अधिक ठहरती नहीं थीं यह कहकर- 'जो दे उसका भी भला, न दे उसका भी भला' सबकी मंगल कामना कर चल देती थीं।

अभी-अभी 15 अप्रेल को चैत्रीय नवरात्रा समाप्त हुई है। श्रावण में, महाराष्ट्र में सावन के सोमवारों को विशेषत: और वैसे साधारण सोमवारों को बेल पत्र देने वाले मुख और शारदीय चैत्रीय नवरात्रों में मध्यप्रदेश में विशेषत: देश में अन्यत्र भी पानी डालने वाली मालिनों का महत्व बढ़ जाता है।

नवरात्रों में तो लोकजीवन मातामय हो जाता है। दोनों नवरात्रों के प्रारंभ होने पर सुबह-सुबह तुरही बजाकर माता की आखौती मांगने वालों की पुकार से गांव-नगर के रास्ते, सड़कें, गली, मोहल्लगे गूंज उठते थे-

'बाई! माता की आखौती
डार देउ, गेहूं चावल
रूपया, पईसा, अधेला,
कछू दै देउ।'

मां की आखौती में देने वाले की चाइस, देने की सामर्थ्य का विचार था। इस बार की नवरात्रों में स्वास्थ्य सीमा में मैं पहले जैसी विधिवत नवरात्र की देवी पूजा तो नहीं कर सकी पर सन् 1943 से 1950 तक मुरैना के हाई स्कूल के अध्यापकों के और गणेशपुरा के घरों में भी, दोनों नवरात्रों के नौ दिन शरद और वसंत ऋतु में मिलते फूलों को पानी डालती भागो (भागवती) मालिन की यादों से पूरे चैत्रीय नवरात्र की देवी पूजा की। उसी के मन की श्रद्धा मेरा संबल बनी। भागो, दोनों नवरात्रों के फूल सुबह-सुबह देहरी पर रख थोड़ी भीतर रसोई तक सुनाई पड़ जाये ऐसी आवाज में कहती- 'बहूजी! पाती धरें जानीं।' और भागो की आवाज से पूजा के लिए पाती धरने से पूरा घर श्रद्धामय हो उठता था।

जीवनमूल्यों के गायक पोषक मन-चिकित्सक ये तो कुछ हैं। और भी बहुत से हैं पर इन सबमें कुछ अलग का व्यक्तित्व है। महाराष्ट्र के वासुदेवों का वासुदेव अलस सुबह पूरे गांव को जगाने एक लंबा जागरण गीत गाता गांव के रास्तों पर घूमता है। जागरण गीत की तुक है- 'वासुदेव आला हो वासुदेव आला'। शुरू की पंक्तियां उसकी फेरी के समय और वाद्य की ध्वनि का परिचय देती हैं-

'टुल्लम-टुल्लम टाल वाजवितो
मुखी हरीचे नाम गीतो
पहारे ची फरीला वासुदेव आला
वासुदेव आला, तो वासुदेव आला।'

अर्थात् टाल वाद्य बजाता, मुंह से हरीनाम गाता, प्रभात की फरी के लिए वासुदेव आया है। वासुदेव आया से तात्पर्य था सुबह हुई। वासुदेव आया है जग जाओ और अपने काम धंधों से लगो।

ऐसे देशभर के प्रांतों, शहरों, नगरों, अंचलों, जनपदों में मानव जीवनमूल्यों के गायक उद्घोषक प्रसारक रक्षक, मन-चिकित्सक कितने-कितने वासुदेव होंगे, किसे पता है। महाराष्ट्र के वासुदेव कहीं रूकते नहीं थे। वासुदेव को कुछ देने को आवाज दे रोककर बुलाना होता है।

कान्यो मान्यो

असक्तों का साहित्यिक सम्मान

इसबार कान्यो थोड़ा अधिक गंभीर था। मुंह लटकाये रूंआसे स्वर में बोला- 'मेरे मन में उन साहित्यकारों के सम्मान की लुएं उठ रही हैं जो असक्त हैं।' मान्यो बोला- 'विचार तो उत्तम ही नहीं, अति उत्तम है पर उनका भी सम्मान होना चाहिये जो सित्तर के दशक में चल रहे हैं और जिनमें काम करने का, सृजन का अभी भी जोश है। वे सम्मान पाकर अधिक उत्साहित होंगे तथा रही सही उम्र में ताजगी लेकर अच्छा काम कर सकेंगे।'

कान्यो सोच में पड़ गया तो मान्यो ने हाथ का इशारा देते धीरज से समझाया, ऐसा करो कि तुम्हारे ब्याह किये को 66 वर्ष होने को आए हैं सो 66 जनों का सम्मान कर दो। कान्यो को यह सुझाव तो ठीक ही लगा पर सोचने लगा कि सम्मान की यह सूची बढ़ जाये तो लगे हाथ ससुरालवालों को भी निपटा दूंगा। वे भी कल्पनाशील हैं। भावुक हैं। उनकी संवाद-वार्ता में भी साहित्य की भरपूर विषय-सामग्री भरी रहती है। फर्क यही है केवल कि वे कागज पर कलम नहीं उतारते हैं पर साहित्यकार अपनी रचनाओं में वही सबकुछ लिखता है जो इन जैसे सामाजिकों में पाई जाती है इसीलिए तो साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है।

मान्यो से उसने सहमति देते उस सूची को बढ़ाकर एक सौ एक तक पहुंचाने को कहा ताकि वह पत्नी के सभी परिजनों को निपटा सके। बोला कि सबको समारोह में बुला-बुलाकर सम्मान देना थोड़ा मुश्किल लग रहा है। कुछ तो बहुत छोटे हैं जो अभी टू व्हीलर चलाने को भी मान्य नहीं हैं। मान्यो ने परिस्थिति भांपकर कहा, कोई बात नहीं, कुछेक वरिष्ठमनों को समारोह में सम्मानित किया जाय, शेष के लिए अलग से खिड़की लगा देंगे ताकि वे वहां से अपना सम्मान ग्रहण कर लें। यह कह मान्यो ने टान्यो को मोबाइल मिलाया। कहा कि वह शीघ्र ही जहां खड़ा हो, तत्काल उसके पास पहुंच जाय। टान्यो समाजसेवी प्रेत की तरह हाजिर हो गया। सारी बातें सुन बोला, जो बहुत असक्त हैं, लंबे समय से बिस्तर पर बड़बड़ा रहे हैं उनका क्या होगा।

मान्यो विचार में पड़ गया कि टान्यो का कहना तो सही है। बिस्तर पर एकाध तो ऐसे सोये पड़े हैं कि उनके हार्ट का हारमोन्स धौंकनी की तरह निन्याणु डूबे, एक तिर रहा की सूचना दे रहा है। ऐसी स्थिति में टान्यो ने नेक राय दी कि सारे झंझटों से मुक्त होने के लिए क्यों न मुर्दे को श्मशान पहुंचाने के पूर्व वचले वासे में जहां विश्राम दिया जाता है वहीं उसका शॉल, श्रीफल से भावभीना स्वागत-सत्कार कर दिया जाय।

मान्यो ने कान्यो की तरफ इशारा दिया कि टान्यो की राय समझ में आई कि नहीं। सब अच्छी सलाहों में एक अच्छी यह भी हो सकती है कि क्यों न सम्मान के किट्स बनाकर एक-एक उनके घर पहुंचा दिया जाय जैसे पहले बहू के ससुराल पहुंचने पर सूचनापरक मंगल रीति का निर्वाह करते हुए एक-एक लेणा प्रत्येक घर पहुंचा दिया जाता या फिर जीमण के नूते में जो जीमने नहीं पहुंच पाता उसके नाम का परूसा उसके घर पहुंचाने की व्यवस्था कर दी जाती। गांवों में तो आज भी ये दोनों प्रथाएं देखने को मिलती हैं।

कान्यो बोला, तो अपने जन्म स्थान में ही यह सम्मान रख लिया जाय। शहर में तो दूरियां भी बहुत हैं और फिर साहित्यकारों को चिन्हित करना भी मुश्किल हो जायेगा। कोई नाराज हो गया तो वह चैन से नहीं रहने देगा फिर साहित्यकार की परिभाषा क्या जिसके आधार पर उसका सम्मान किया जायेगा। वहां तो जिसके मूंछ का बाल भी नहीं उगा वह भी अपनेआप को तीसमारखां समझता है और कुछ ऐसी भी साहित्यकारियां हैं जिनकी मूंछ के न सही पर दाढ़ी के दो-तीन बाल जरूर झपकी ले रहे हैं। गांवों में यह रगड़ा नहीं है। वहां साहित्यकार सम्मेलन के अवसर पर हाव हंगरी नूता दे देंगे कि जो भी साहित्यकार हो उसे खुला निमंत्रण है कि वह भाग ले। जो भी भाग लेगा वही तो सम्मान पायेगा फिर अपनी जन्मभौम है। दो-चार सम्मान च्यादा भी चले गये तो कौनसी भैंस अटारी चढ़ जायेगी। शहर में तो रात-दिन ऐसे आयोजन होते रहते हैं तब ही तो एक-दूसरे की पगड़ी-दुपट्टा उछलता रहता है।

तीनों ने सिद्धांतत: बात स्वीकार कर ली। तय रहा कि इसके लिए तीन सदस्यीय कमेटी बना ली जाय। कान्यो तो आयोजक था ही। मान्यो पर उसका और टान्यो पर मान्यो का पूरा भरोसा था। तीनों भरोसेबंद थे और एक-दूसरे के भरोसे की गांठ बांधे थे सो इस प्रस्ताव पर सलूंबर की सही लगा दी गई।

पत्रकारिता शिक्षा के पितामह पी.पी. सिंह

- डॉ0 मनोहर प्रभाकर-

पत्रकारिता दिवस वर्ष 30 मई पर हिन्दी का पहला समाचार पत्र उदन्त मार्तण्ड कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था। इस प्रसंग में मुझे सहसा पत्रकारिता शिक्षा के पितामह प्रो. पृथ्वीपाल सिंह का स्मरण हो आता है। एक तरह से वे भारत के जोसेफ पुल्तिजर थे।

पत्रकारिता के व्यवसाय में आज जो लोग कार्य कर रहे हैं उनमें बहुत कम लोगों को यह ज्ञात है कि जिस प्रकार अमरीका में पत्रकारिता के शिक्षण का पहला स्कूल जोसेफ पुल्तिजर ने स्थापित करवाया था, ठीक उसी प्रकार भारत में पत्रकारिता शिक्षा की शुरूआत अनेक प्रतिकूल परिस्थितियों में प्रो. पृथ्वीपाल सिंह ने की थी। प्रो. पी.पी.सिंह शैक्षणिक और सामाजिक क्षेत्रों में पी.पी.सिंह के नाम से ही विख्यात थे।

प्रो.पी.पी.सिंह अपनी पत्रकारिता की शिक्षा लेने के लिए अमेरिका के मिसौरी विश्वविद्यालय में गये थे और वहां से उन्होंने पत्रकारिता में मास्टर्स डिग्री और पीएच.डी. की उपाधियां प्राप्त की थी। वहां से लौटने के बाद उन्होंने बड़े प्रयत्नों से अविभाजित भारत में लाहौर स्थित पंजाब विश्वविद्यालय में पत्रकारिता की शिक्षा का श्रीगणेश कराया था।

जब देश का विभाजन हुआ तो पंजाब विश्वविद्यालय का भी विद्यटन हो गया और कुछ समय तक दिल्ली में कैम्प कॉलेज स्थापित करके वहां पंजाब विश्वविद्यालय की कक्षायें चलाई गयीं। इसी कैम्प कॉलेज में पी.पी.सिंह भी गेस्ट फैकल्टी के रूप में अपना पत्रकारिता का डिप्लोमा कोर्स चलाते रहे। कुछ अर्से बाद विभाजन के पश्चात पंजाब यूनिवर्सिटी ईस्ट पंजाब यूनिवर्सिटी के नाम से अस्थाई रूप से शिमला में चलती रही और अन्ततोगत्वा जब चण्डीगढ़ का निर्माण हुआ तो वहां पंजाब यूनिवर्सिटी के नाम से ईस्ट शब्द को हटा दिया गया और वहां पंजाब यूनिवर्सिटी के नाम से सारे विभाग चलने लगे। आज पंजाब विश्वविद्यालय देश के बड़े विख्यात शिक्षण संस्थाओं में है और वहां का पत्रकारिता विभाग देश के सरनाम शिक्षण केन्द्रों में माना जाता है।

मेरा यह सौभाग्य था कि बहुत अल्प समय के लिए मैं स्वयं भी प्रो.पी.पी.सिंह के सम्पर्क में रहा। सन् 1962 में मुझे यह जुनून सवार हुआ कि मैं पत्रकारिता में कुछ ऐसी उपाधियां प्राप्त कर लूं जिससे मैं अध्यापन के क्षेत्र में जा सकूं। वर्ष 1962 की जुलाई मास की घटना है- मैं राज्य सेवा से कुछ माह का अवकाश लेकर चण्डीगढ़ चला गया। वहां के पत्रकारिता विभाग में मैंने प्रवेश ले लिया। लेकिन मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब प्रो.पी.पी.सिंह ने एक दिन मुझे अपने चैम्बर में बुलाया और मुझे पास बैठाकर बड़ी संजीदगी के साथ बोले-'बेटे तुम अपना पैसा और वक्त क्यों बर्बाद कर रहे हो। तुम्हारी जो कापियां मैंने जांची हैं उनसे मेरा इम्प्रेशन यह बना है कि जो कुछ यहां पढ़ाया जा रहा है उससे अधिक तुम पहले से ही जानते हो।'

उन्होंने मेरे कुछ छपे हुए लेखों को देखकर यह परामर्श भी दिया कि मुझे किसी अमरीकी विश्वविद्यालय से स्कॉलरशिप लेने का प्रयत्न करना चाहिए और मैं पत्रकारिता में उच्चतर अध्ययन करने का उनका आशीर्वाद लेकर जयपुर आ गया और मैंने अमरीका के कुछ ऐसे विश्वविद्यालयों से पत्राचार प्रारम्भ किया जो पत्रकारिता की शिक्षा के लिए मशहूर थे। मेरे जो लेख हिन्दू, हिन्दुस्तान टॉइम्स और मॉर्डन रिव्यू में छपे थे, उनके आधार पर सिराक्यूज विश्वविद्यालय के प्रो. रॉलैण्ड वूल्जले ने न केवल मेरे लेखन की प्रशंसा ही की अपितु मुझे वहां प्रवेश देने में भी प्रसन्नता प्रकट की।

पहले वर्ष में सात सौ डॉलर की स्कॉलरशिप का आश्वासन दिया गया और प्रो. वूल्जले ने यह भी विश्वास दिलाया कि एक वर्ष बाद मुझे अस्सिटेंटशिप दे दी जायेगी। वहां अस्सिटेंटशिप का अर्थ होता था 'अस्सिटेंट टू दी प्रोफेसर'। उल्लेखनीय है कि प्रो. रॉलैण्ड वूल्जले कुछ वर्षों तक नागपुर के हिसलॉप कॉलेज में रहे थे और उनके साथ कुछ और अन्य अमरीकी पत्रकारिता विशेषज्ञ भी थे। इस कॉलेज से सुभाष किरपेकर जैसे कई श्रेष्ठ पत्रकार निकले थे। हिन्दी 'नवनीत' के सम्पादक जो बम्बई के 'नवभारत टाइम्स' के सम्पादक भी रहे, मेरे मित्र विश्वनाथ सचदेव भी वहीं के प्रोडक्ट हैं।

मेरे परामर्श पर ही वे हिसलॉप कॉलेज में गये थे पर तब तक वहां का परिदृश्य बदल चुका था। अब वहां प्रो. रॉलैण्ड वूल्जले के स्थान पर भारतीय प्रो. के.ई. ईपन विभाग के अध्यक्ष हो गये थे। वे पहले भारतीय अध्यक्ष थे। प्रो. ईपन ने भी मुझे नागपुर में अध्ययन के लिए आमंत्रित किया था पर शायद नियति को यह मंजूर नहीं था। पारिवारिक परिस्थितियां ऐसी रहीं कि न मैं सिराक्यूज जा सका और न नागपुर ही। जो भी हो प्रो. पृथ्वीपाल सिंह के साथ मैंने जो दिन गुजारे थे, उनकी यादें मेरे मन पर आज भी मंडराती रहती हैं।

चार जेबी पुस्तकों में जीवन दर्शन

श्री जिनकांतिसागर सूरि स्मारक ट्रस्ट जहाज मंदिर मांडवला (राजस्थान) द्वारा जो साहित्य निरंतर प्रकाशित किया जा रहा है उसमें से अधिकतर अल्प मूल्यों की जेबी पुस्तकों के रूप में मूल्यवान एवं उपयोगी साहित्य है। प्रश्नोत्तरी, चिंतन, प्रवचन, कथा, इतिहास, न्याय, स्तवन, प्रतिक्रमण,

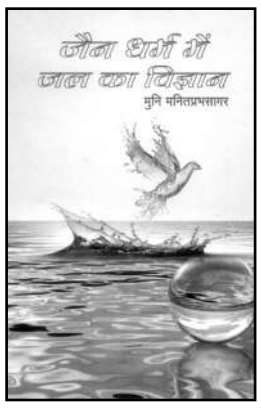

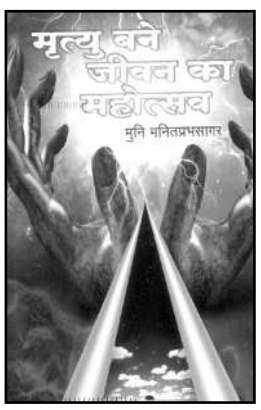

तत्वज्ञान विषयक साहित्य स्वाध्याय की सुवास लिए है जिसे कोई भी व्यक्ति सहज रूप में अपने साथ रखे रह सकता है। जहां जब चाहे उसका पारायण-पाठ कर सकता है। अवसरानुकूल यह साहित्य पढ़ने के लिए अन्यों को दिया जा सकता है और मन करे तो इतनी सस्ती पुस्तकें भेंट स्वरूप भी दे सकता है।

इन पुस्तकों का अच्छा रूप यह है कि ये अच्छे आर्ट पेपर पर विविध रंगी चित्रों से युक्त आकर्षक तथा मनोहारी हैं। इनके विषयों से संबंधित जैन धर्म-दर्शन से जुड़ी जीवन जागरणपरक सामग्री के प्रामाणिक एवं पुख्ता ज्ञान के साथ-साथ ग्रहणीय शिक्षा, सीख, उपदेश तथा सार तत्व की समझ घर बैठे प्राप्त की जा सकती है। इसकी भाषा अत्यंत सरल समझाइशभरी है तथा संप्रेषणीय है।

जैन धर्म में जल का विज्ञान नामक पुस्तक में जल की एक-एक बूंद को उपयोगितामूलक बताया है और पानी कैसा भी हो, छानकर पीने की नसीहत दी है यथा- जल को व्यर्थ मत गंवाओ। हर बूंद में असंख्य जीव हैं उनकी जयणा करके दया-धर्म का विस्तार करो। बाजार में बिकने वाले बिसलेरी बोतल केन के पानी अनछने होते हैं, उसका सर्वथा त्याग करें। **मृत्यु बने जीवन का महोत्सव** में विभिन्न उद्धरणों, कथा, घटनाओं से मृत्यु से निडर रहने को कहा गया है। पर्वत से गिरकर, जल में डूबकर, जहर खाकर, आत्मदाह कर, प्रतिशोध रख तथा फांसी लगाकर मृत्यु का वरण करना सर्वथा वर्जित है। **वैराग्य शतक** को मूल भावार्थ सहित देकर प्रत्येक छंद में निहित उपदेश की ओर ध्यानाकर्षण किया गया है। **मंत्र नवकार करे भवपार** सब मंत्रों से श्रेष्ठ कहा गया है। सभी पुस्तकों के लेखक मुनि मनितप्रभसागर हैं।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत। फोन : 0294-2429291, मोबाइल - 9414165391, टाईटल रजि. RAJHIN17670, Email : shabdranjanudr@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।